यातायात की कहानी

यातायात की कहानी

लेखक

मीर नजाबत अली

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

जनवरी, १९७४
पौष, १८९५

मूल्य : रु० २.५०

प्रकाशन विभाग में, त्रियोगी नारायण, सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान भवन, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली १६ द्वारा प्रकाशित तथा एवरेस्ट प्रेस, ४ चमेलियान रोड, दिल्ली ६ में मुद्रित ।

प्रकाशकीय

विश्व का कोई भी देश पुराण-कथा और आख्यान के क्षेत्र में, जो आज भी भारत के जन-जीवन में व्याप्त है, इस देश का मुकाबला नहीं कर सकता। भारत-भूमि ने अनेक महान चिंतकों, समाज-सुधारकों, संतों, धार्मिक नेताओं एवं महान राष्ट्र नायकों को समय-समय पर जन्म दिया है। हमारी संस्कृति की धारा अटूट रही है और हमारी सांस्कृतिक विरासत अनमोल है। किशोरों को इस सांस्कृतिक सम्पदा से परिचित कराने के उद्देश्य से परिषद् ने पूरक-पठन-साहित्य के प्रकाशन की योजना बनाई है। इसके अन्तर्गत १४ से १७ वर्ष के आयु-वर्गों के बच्चों के लिए कई पुस्तक मालाएँ प्रकाशित की जा रही हैं। इनमें राष्ट्रीय एकता माला, आधुनिक समाज-सुधारक, भारत के संत कवि, हमारी सांस्कृतिक सम्पदा, हमारे धार्मिक नेता आदि प्रमुख हैं। ये पुस्तिकाएँ हिन्दी और अंग्रेजी में साथ-साथ प्रकाशित की जा रही हैं। कुछ मूल रूप से हिन्दी में लिखी गई हैं, कुछ को अंग्रेजी से रूपांतरित किया गया है।

प्रस्तुत पुस्तिका मूल रूप से अंग्रेजी में लिखी गई पुस्तक का हिन्दी अनुवाद है जिसे मुहम्मद जैनुलआबिदीन सिद्दीकी ने किया है। परिषद् को आशा है कि इससे अपेक्षित उद्देश्य की पूर्ति होगी।

सं० वि० चंद्रशेखर अय्या
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

नई दिल्ली
जनवरी, १९७१

विषय-सूची



अध्याय १

यातायात का विकास

प्राचीन मानव

प्राचीन मानव के पास यातायात के कोई साधन नहीं थे। एक से दूसरी जगह जाने के लिए उसके सामने दो ही रास्ते थे—पैदल चलना अथवा दौड़ना। इसके अलावा वह अपने साथ कोई भारी सामान भी नहीं ले जा सकता था। वह केवल उतना ही समान ले जा पाता था, जितना कि उसके हाथों में समा सके अथवा जितना वह अपनी पीठ पर लाद सके। उसे सुदूर इलाकों की यात्रा कर पाना और भारी बोझा ले जाना अवश्य मुश्किल लगता होगा।

लेकिन उसका एक ही जगह हमेशा बना रहना संभव नहीं था। शिकार की तलाश में, जो उसका मुख्य भोजन था, उसे नए स्थानों में जाना ही पड़ता था। न जाने पर भूखों मरने की नौबत आ सकती थी। दुश्मन के हमले के समय जान बचाने के लिए या तो वह लड़ता था, अथवा किसी सुरक्षित जगह शरण लेने के लिए भाग जाता था। समय-समय पर बदलते हुए मौसम ने भी उसे कोई ऐसा शरण स्थल खोजने के लिए मजबूर कर दिया होगा, जहाँ कि वह आराम और खुशहाली के साथ रह सके।

जब कभी और जहाँ कहीं उसे जाना पड़ा, उसको ऊबड़-खाबड़ और जंगली इलाके पार करने पड़ते थे। उसके दिशा निर्देशन के लिए उस समय कोई सड़कें नहीं थीं। नदी और नाले उसकी राहों में रुकावट बनते थे। यदि उसके रास्ते में कोई छिछली नदी आती थी तो वह उसे आसानी से पार कर लेता था, किंतु गहरी व बड़ी नदी के सामने उसको असहाय रह जाना पड़ता था। एक तरफ शत्रुओं का डर और आवश्यकताएँ उसे आगे बढ़ने को मजबूर करती थी, दूसरी तरफ यह रुकावटें उसके उसके दुर्भाग्य का कारण बनती रहती थीं। संभवतः वह नदी पार जाकर अपनी जीवन रक्षा कर सकता था, लेकिन असहाय सा होकर एक तरफ फँस कर रह जाता था। "इधर कुँआ उधर खाई" वाली कहावत जितनी इस मनुष्य पर लागू होती है और किसी पर नहीं।

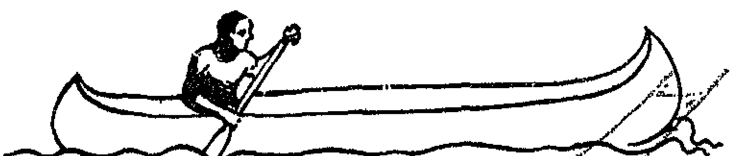
यह कहा जाता है कि आवश्यकता अविष्कार की जननी है। प्राचीन मानव के सामने ऐसी परिस्थितियाँ आ जाती थीं, जिनसे बचने के लिए या तो वह कोई साधन खोजे या मौत के मुँह में समा जाए। शायद यही कारण है, जिसने उसमें पुरुषत्व की भावना जागृत की होगी और उसे आज की स्थिति में लाने तक निर्देशित किया होगा।

बेड़े और डोंगियाँ

पानी की सतह पर चलने के लिए मानव ने नदी अथवा पोखर में बहते हुए लकड़ी के लट्ठे या तख्ते से अवश्य प्रेरणा ली होगी। उसने इन पर पक्षियों को बैठे हुए और लट्ठों द्वारा उनका बोझ सँभाला जाना देखा होगा। इसके अलावा उसने इन पर चढ़कर छोटे जानवरों को भी बहते देखा होगा। उसने सोचा होगा कि क्या एक बड़े लट्ठे का अथवा कई छोटे लट्ठों या बेंत के बँडलों को बाँध कर उपयोग नहीं किया जा सकता? संभव है यह उसका बोझ ढो सकें। जिस क्षण से पहले मानव ने एक लट्ठे या लट्ठे के बेड़े अथवा बेंतों के बँडलों का प्रयोग किया, उसी दिन से यातायात के साधन का जन्म माना जाएगा।

यह एक महान अविष्कार था, इससे उसे रास्तों में पड़ने वाले नालों और नदियों को पार करके दूर की यात्रा करने और संभवतः कई बार अपनी जीवन रक्षा करने का अवसर मिल गया होगा। इससे उसे अपनी सबसे गंभीर समस्या यानी खाद्य समस्या भी हल करने में मदद मिली होगी। झील और पोखर चहल-पहल से गूंजने लगे। किनारे खड़े होकर छिछले पानी में वह सिर्फ छोटी मछली ही पकड़ पाता होगा। झील के गहरे पानी में गोता मार कर छिप जाने वाली बड़ी मछलियों को पकड़ने की इच्छा मन में दबाए रहता होगा। लेकिन दुर्भाग्य से वे उसकी पहुँच के बाहर रहती थीं। बेड़ा पुनः उसकी मदद में आया होगा। इससे वह झील में उतर कर अपनी मन पसंद बड़ी मछलियाँ पकने में समर्थ हुआ होगा।

आज भी इस तरह के अनगढ़ बेड़ों का प्रचलन है। मछेरे ऐसे बेड़े बनाकर कई किलोमीटर दूर तक मछली पकड़ने चले जाते हैं।



२. डोंगी

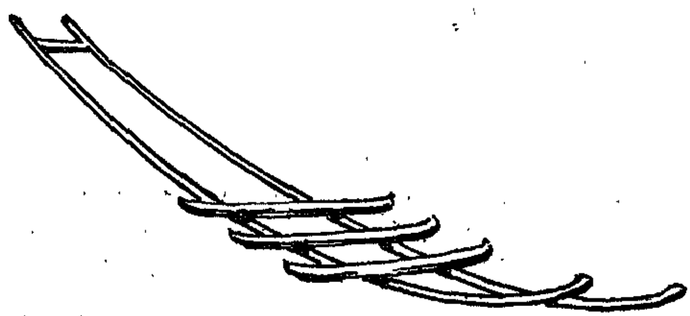
पहला बेड़ा संभवतः १५ हजार वर्ष पहले बना होगा। उस समय मनुष्य केवल पत्थर के ही अनगढ़ औजारों का प्रयोग करता था। जैसे-जैसे उसके औजारों में सुधार हुआ, उसने यह अनुभव किया कि वह बड़े पेड़ों की शाखाएँ काट कर नाव के रूप में उनका इस्तेमाल कर सकता है। इन्हें डोंगियाँ कहा जाता है और अवश्य ये बेड़े से अधिक उपयोगी और चलाने में आसान सिद्ध हुई होंगी। इनका उपयोग मानव द्वारा धातु की खोज से बहुत पहले तक होता रहा।

खींचकर ले जाने का साधन या स्लेज

जमीन पर यातायात के साधनों का अविष्कार करना एक दूसरी बात थी।

इसके लिए तीन बातें ध्यान में रखनी होती हैं। ऐसे साधन को दूर तक जाने वाला, तेज चलने वाला और बिना सहायता के मनुष्य जितना बोझ ले जा सके उससे ज्यादा भारी बोझ उठाने की क्षमता वाला होना चाहिए। यह कोई जरूरी नहीं था कि यह तीनों कार्य एक ही साधन द्वारा सम्पन्न हो सकें लेकिन ये ऐसी समस्याएँ थी, जिन्हें उस समय हल किया जाना बहुत आवश्यक था।

उदाहरण के लिए कई व्यक्ति अपने कंधों पर एक बड़ा बाँस लेकर चल सकते थे, जिसमें भारी बोझ लटका हो। इसके अलावा वे काफी दूर तक इस बोझ को ले जा सकते थे जो एक अकेले आदमी के बस की बात नहीं थी लेकिन इन आदमियों की कुल मिलाकर रफ्तार एक अकेले आदमी से ज्यादा नहीं हो सकती। फिलहाल यह एक ऐसी उपलब्धि थी, जिससे भारी बोझों को एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जा सकता था।



३. स्लेज

भूमि पर जो सबसे पहला यातातात साधन प्रयोग किया गया, वह खींचकर अथवा सरका कर ले जाने वाली स्लेज थी। इस साधन का सबसे पहले उपयोग दस हजार वर्ष पूर्व हुआ होगा और संभवतः पेड़ की छाल अथवा पशुओं के चमड़े का बना होगा। इसका मतलब सिर्फ यही है कि मनुष्य को अपनी पीठ पर

माल ढोने के बजाय खींच कर ले जाना पड़ता था। जहाँ उबड़-खाबड़ जमीन पड़ती होगी वहाँ तो बोझ खींचने में मनुष्य का दम ही निकल जाता होगा। लेकिन उस समय दुनियाँ में कई ऐसे इलाके भी थे, जहाँ की जमीन पर बर्फ की परतें जमी रहती थीं। ऐसे स्थानों पर स्लेज मनुष्य के लिए वरदान साबित हुई होंगी, यह दूसरी बात है कि उनकी गति मानव से ज्यादा तेज न रही हो।

पशुओं को वश में करना या पशुपालन

भूमि यातायात में वास्तविक विकास उस समय हुआ, जब मानव ने पशुओं को अपने वश में करके उन्हें पालना शुरू किया। सबसे पहले मनुष्य ने अपने सबसे अच्छे साथी कुत्ते को पाला। इसे लगभग दस हजार वर्ष पूर्व पालना शुरू किया गया था और अधिकतर इसका उपयोग शिकार के लिए होता था। करीब छः हजार वर्ष पहले स्लेज गड़ियों में सुधार किया गया और उनका आधार कड़ी लकड़ी के अच्छी तरह सरक सकने वाले तख्ते बनाए गए। पेड़ों के तनों को काट कर उन्हें डोंगियों का रूप देकर स्लेज की तरह इस्तेमाल किया गया। चिकनी सतह वाली लकड़ी आसानी से बर्फ पर फिसल सकती थी।

आज भी शीत प्रदेशों में स्लेज का उपयोग होता है। दक्षिणी ध्रुव के नायक रोनैल्ड एमंडसेन ने १९११ में कुत्तों द्वारा खींची जाने वाली स्लेज गाड़ी द्वारा ध्रुव प्रदेश की यात्रा की थी।

समय बीतने के साथ ही अन्य किस्म के पशु भी पाले जाने लगे। छः हजार वर्ष पहले बकरियाँ और भेड़ें पाली जाती थीं। गदहों का समान ढोने वाले जानवर के रूप में उपयोग सबसे पहले ५ हजार वर्ष पूर्व मध्य-पूर्व में हुआ था। संभवतः इनका प्रयोग सवारियों के लिए भी किया जाता था। आगे चलकर घोड़ों का भी उपयोग होने लगा। अन्य जानवरों का प्रयोग उनकी अधिक मात्रा में उपलब्धि के आधार पर विश्व के विभिन्न भागों में किया जाने लगा था। इन में बैल और हाथी भारत में,

ऊँट अरब में, ध्रुवीय एवं अर्द्ध ध्रुवीय क्षेत्रों में बारहसिंघा, तिब्बत में याक और पेरू में ल्हामा वाहन व यातायात के लिए प्रयुक्त होते थे।

सवारी के लिए आमतौर से घोड़ों का इस्तेमाल किया जाता था। इनमें कुछ चुनी हुई नस्लों को सवारी के लिए और कुछ को माल की ढुलाई के लिए विकसित किया गया। कुछ सदियों पहले तक घोड़ा यातायात का आम साधन था।

चक्के (पहिए) का आविष्कार

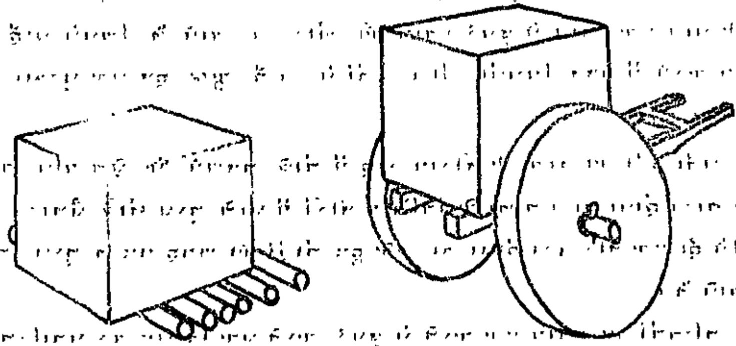
४ हजार वर्ष पूर्व हुए पहिए के आविष्कार ने यातायात के क्षेत्र में क्रांति ला दी थी। प्राचीन काल का यह सबसे महत्वपूर्ण आविष्कार था। समय-समय पर चक्कों अथवा पहियों में काफी सुधार किए गए और आधुनिक काल में भी यह जारी है। धरती पर यातायात के लिए प्रयोग में आने वाला सबसे आधुनिक साधन बिना पहियों के व्यर्थ है।

मिस्र के सम्राट खेओप्स ने करीब पाँच हजार वर्ष पहले अपने लिए एक खूबसूरत मकबरा बनवाया था। यह आज भी विश्व के सात आश्चर्यों में एक माना जाता है। यह काफी विशाल था। इसका आधार २३४ वर्गमीटर चौकोर था और जमीन से इसकी सतह १४७ मीटर ऊँची थी। अपने आकार और शक्ल के कारण इसे महान पिरामिड का नाम दिया गया है।

सबसे आश्चर्य की बात, इस पिरामिड के निर्माण में इस्तेमाल किए गए पत्थरों का आकार है। यह इतने भारी हैं कि प्रत्येक का वजन साठ टन तक है। प्रयोग में लाए गए सभी पत्थरों का कुल वजन सत्तर लाख टन बैठता है। जिस जगह से ये पत्थर लाए गए थे, वह सैकड़ों किलोमीटर दूर थी। इन्हें संभवतः नील नदी के किनारे तक खींच कर लाया गया होगा और बाद में नावों में लाद कर निर्माण स्थल तक पहुँचाया गया होगा। आधुनिक समय में भी, जबकि ऐसे काम के लिए मशीनें मौजूद हैं, इसे एक बड़ी उपलब्धि ही कहा जाएगा। मिस्रवासियों ने चार हजार से ज्यादा वर्ष पहले यह कार्य किस प्रकार किया होगा?

इसमें कोई शक नहीं कि इस काम में काफी गुलाम लगाए गए होंगे। लेकिन फिर भी हजारों गुलामों के बस की बात नहीं थी कि पत्थरों को लादा और चल दिए। ऐसा विश्वास किया जाता है कि पत्थरों को सरकाने के लिए मिस्रियों ने रोलरों का प्रयोग किया होगा। आप सबने देखा होगा किस प्रकार नीचे गोल वस्तुएँ रख कर भारी बोझ को सरकाया जाता है। रोलर दबाव को कम करके आसानी के साथ भारी वजन को आगे खिसकाने में मदद देते हैं। यदि मिस्री पत्थरों को सरकाने में यह तरीका इस्तेमाल कर रहे थे तो अवश्य ही वे रोलरों के उपयोग में कुशल या सिद्धहस्त थे। शायद वे काफी अर्से से रोलरों का प्रयोग करते रहे हों।

देखने में तो ऐसा लगता है कि रोलरों से चक्कों तक आना कुछ ही कदम का फासला तय करना था। लेकिन यह काम इतना आसान नहीं है जैसा कि बाहर से



रोलर तथा चक्के

मालूम देता है। रोलर या घुमावदार चीज जमीन पर रखी जाती है; इसका बोझ से कोई संबंध नहीं होता है। जबकि ठीक इसके विपरीत चक्कों के प्रत्येक जोड़े बीच से एक सीधे डंडे से जुड़े होते हैं, जिसे धुरी कहा जाता है। एक बोझ आगे बढ़ जाने पर रोलर को पीछे छोड़ देता है और हर समय उसके आगे रोलर रखने पड़ते हैं। पहिए कभी पीछे नहीं छूटते हैं बल्कि बोझ के साथ चलते जाते हैं। जिस किसी ने चक्कों

अथवा पहियों का अविष्कार किया है, वास्तव में एक अत्यंत चतुर कारीगर रहा होगा।

पहले चक्के ठोस रहे होंगे और इन्हें मोटे तख्तों से काट कर लगभग गोल आकार दिया गया होगा। समय-समय पर अच्छे औजारों की प्राप्ति होने के साथ ही इनमें सुधार होता रहा और गति में तेजी संभव हो सकी।

पहिए के आविष्कार के बाद से कई तरह की गाड़ियाँ, वैगन, बग्घियाँ और रथ खोज निकाले गए। प्रत्येक अपनी आवश्यकता के अनुकूल था। भारी गाड़ियों और वैगनों का इस्तेमाल माल के लाने और ले जाने में किया जाता था। सवारियों के लिए बग्घियों का उपयोग होता था, जो हल्की और अच्छी बनी होती थीं। छोटे वाहनों में दो पहिए और बड़े में दो जोड़े या इससे ज्यादा पहिए होते थे।

रथों का इस्तेमाल युद्ध में होता था। ताकतवर घोड़े महत्वपूर्ण सेनापतियों को तेजी के साथ एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर ले जाते थे, जिससे उन्हें युद्ध का निर्देशन करने में मदद मिलती थी। रथों से उन्हें कुछ हद तक सुरक्षा भी प्राप्त होती थी।

लंबी दूरी की यात्रा के दौरान राह में घोड़े बदलने से तेज गति का बेहतर औसत प्राप्त होता था। यात्रा के विभिन्न दौरों में ताजे चुस्त घोड़े तैयार रखे जाते थे। जैसे ही एक दौर पूरा होता था, थके हुए घोड़ों की जगह नए व चुस्त घोड़े जोत दिए जाते थे।

बग्घियों का प्रयोग एक कस्बे से दूसरे कस्बे तक किराए पर सवारियाँ ढोने में भी होता था। जो लोग खुद अपने वाहन नहीं रख सकते थे वे किराए के वाहनों का लाभ उठाते थे। इंगलैंड में इन्हें स्टेज कोचेज के नाम से पुकारा जाता था और इनका प्रचलन अठारहवीं सदी में हुआ। इसी तरह के वाहनों की सेवा लंदन शहर की सड़कों पर भी उपलब्ध थी। इनके मालिक अपनी बग्घियों को ओमनीबस कहते थे। यह एक लैटिन शब्द है जिसका अर्थ सबके लिए होता है। हम इस समय भी मुसाफिर ले जाने वाले वाहन को बस कहकर पुकारते हैं, जो ओमनीबस का छोटा शब्द है।

अज्ञात समुद्र की चुनौती

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है भूमि पर प्रयुक्त होने वाले यातायात के साधनों का विकास तो होता रहा किंतु समुद्र की किसी प्रकार की भी उपेक्षा नहीं की गई थी। बेड़े और अनगढ़ डोंगियाँ शीघ्र ही पुराने जमाने की चीजें बन गईं अथवा इनका इस्तेमाल धरती के सुदूर इलाकों में रहने वाले असभ्य व जंगली लोगों के लिए छोड़ दिया गया।

हमने यह देखा है कि किस तरह मिस्रवासी बड़ी तादाद में भारी और विशाल पत्थर सैकड़ों किलोमीटर की दूरी तय करके नील नदी के जरिए लाए थे। वे ऐसा नहीं कर सकते थे अगर उनके पास मजबूत नावें और उनके संचालन की दक्षता न होती।

समय बीतने के साथ ही विभिन्न आकार और प्रकार की नावें व अन्य यान बनते गए। छिछले पानी में सबसे हल्की नावें लंबे बाँसों के जरिए खेई जाने लगीं और गहरे समुद्र में नौसंचालन के लिए पतवारों का प्रयोग होने लगा।

मिस्रियों ने सबसे पहले पतवारों का इस्तेमाल किया। भूमि पर चलने वाले यानों के लिए जो महत्व पहियों का है, वही जलयानों के लिए पतवारों का है। इनसे जलयान की गति और क्षेत्र का विस्तार होता है और करीब डेढ़ सौ वर्ष पहले तक यह उपयोग में आते रहे हैं। यहाँ तक कि जब भाप का प्रयोग होने लगा, तब भी कुछ अर्से के लिए ये काम में लाए जाते रहे और जब लोगों को यह पूरा भरोसा हो गया कि भाप उन्हें रास्ते में धोखा नहीं देगी, तब इनका उपयोग बंद कर दिया गया। पहले के जहाजों में तेज गति के लिए दोनों किनारों पर पतवारों की लंबी कतारें लगाई जाती थीं। रडारों के जरिये उन्हें अपनी दिशा में बनाए रखा जाता था।

समय गुजरने के साथ ही सुधारों सहित बड़े से बड़े आकार के जहाज़ बनने लगे। बाद के जहाजों के मुकाबले यह जहाज कमजोर थे। हम पहले के नाविकों के साहस की सराहना किए बिना नहीं रह सकते हैं, जो अज्ञात समुद्र में इनके द्वारा यात्रा करने की हिम्मत करते थे।

इन साहसी नाविकों में सबसे पुराने फिनीशियाई लोग थे। ईसा से करीब एक हजार वर्ष पहले इन लोगों ने भूमध्य सागर की यात्राएँ की थीं। ईसा से करीब छः सौ वर्ष पहले तत्कालीन मिस्री सम्राट् ने इन नाविकों को अफ़्रीका के सागर तटों का चक्कर लगाने को भेजा था। ऐसा मालूम होता है कि इन लोगों ने यह कार्य कर दिखाया था, लेकिन मिस्र का सम्राट् उनकी कहानी पर विश्वास करने को तैयार नहीं हुआ। यह लोग उत्तर में आइसलैंड तक गए थे।

फिनीशियाई लोगों के बाद रोम के लोगों ने नए स्थानों की खोज और भूमध्य-सागर के तटीय क्षेत्रों में अपने उपनिवेशों की स्थापना का कार्य जारी रखा। इनके जहाज गैली कहलाते थे, जिनमें दोनों किनारों पर पूरे आकार की पतवारों की लंबी कतारें विभिन्न परतों में बिछी रहती थीं। जहाज की पूरी लबाई के बराबर भीत की ओर दोनों तरफ बेंचें बनी रहती थीं जिन पर जंजीरों में जकड़े हुए गुलाम बैठे रहते थे, और पतवारों को चला कर जहाज़ खेते थे। जलयान चलाने वाले यह गुलाम कैदी अथवा युद्धबंदी होते थे। लंबे कोड़ों से लैस निरीक्षक इन्हें जहाज़ की गति तेज रखने को मजबूर करते रहते थे। यदि कोई गुलाम अपने स्थान पर बैठे हुए मर जाता था तो उसकी जगह दूसरा गुलाम ले लेता था। रोम के जहाज़ों के पास जहाज़ों की यात्रा जारी रखने के लिए अवश्य ही गुलामों की एक बड़ी तादाद रहती होगी। एक तरफ तो इन जहाज़ों पर नाच-गाने और दावतें होती रहती थीं, दूसरी तरफ पतवारों के पास गुलाम बेहोश होते रहते थे अथवा मर जाते थे। जब जहाज़ की चाल तेज़ होती थी, तो धनी सरदार दावतों और यात्रा का और ज्यादा मजा लेते थे।

वाईकिंग लोग जो बहुत ही दिलेर थे और उत्तरी समुद्रों में इनके जहाजों का आतंक व्याप्त था। उत्तरी यूरोप से वे लोग प्रेरित होकर वहाँ बस गए। यहाँ तक कि वे ग्रीनलैंड से दक्षिण की ओर भी गए और उनके जहाज उत्तरी अमरीका के किनारों तक जा पहुँचे थे। इस प्रकार कोलंबस से पाँच सौ वर्ष पूर्व नई दुनिया की खोज करने वाले ये सबसे पहले लोग थे।

वाईकिंग लोगों के जहाज़ ड्रैगन के आकार के बनाए जाते थे। प्रत्येक जहाज़ में

एक पाल और दोनों तरफ करीब सोलह-सौलह पतवारें होती थीं। वाईकिंग बहुत भीषण योद्धा थे और जहाँ कहीं भी वे जाते थे, लोगों में भय की लहर दौड़ जाती थी।

फिनीशियाई और वाइकिंग लोगों द्वारा इतना जोखिम उठा कर जो खोजें की गईं वे स्थाई मूल्य की नहीं थीं। फिनीशियाई लोगों ने भूमध्य सागर से आगे कोई उपनिवेश नहीं कायम किए थे। वैसे वाईकिंग नें ग्रीनलैंड में अपनी बस्ती कायम की ली थी, लेकिन वह ज्यादा दिनों तक नहीं रह सकी। वे लोग नई दुनिया के किसी भी इलाके में नहीं बस सके अतएव इनका कार्य दुनिया के गर्त में समा गया, और लोग जल्दी ही उसे भुला बैठे।

इनसे ज्यादा आश्चर्यजनक करतब पोलीनेशियन ने और माइक्रोनेशियन लोगों ने कर दिखाए थे। पोलेनेशिया और माक्रोनेशिया प्रशांत महासागर में द्वीपों के समूह हैं। इन लोगों के पास जहाज नहीं थे। इन्होंने प्राचीन डोंगियों द्वारा भयानक प्रशांत महासागर में यात्राएँ कीं। यह समुद्र उनके लिए एक खुली किताब की तरह था और इन्होंने हजारों मील अज्ञात समुद्रों व इनसे भी ज्यादा अज्ञात द्वीपों को यात्राएँ की थीं।

पूर्व में, दक्षिण अफ़्रीका होकर यूरोपीय लोगों द्वारा समुद्री मार्ग खोले जाने से पहले, अफ़्रीका, अरब, भारत और अन्य देशों के तटों से खूब व्यापार होता था।

भारतीय नाविक बंगाल से अपनी यात्रा शुरू करते थे और बर्मा व ईस्टइंडीज और इससे भी आगे तक जाते थे। भारतीय इनमें से कुछ क्षेत्रों में बस भी गए और अपने साथ अपना धर्म व सांस्कृतिक धरोहर भी ले गए थे।

अरब भी साहसी व्यापारी थे। वे अफ़्रीका के पूर्वी किनारे से होते हुए मिस्र व अन्य स्थानों तक पहुँचते थे। इन लोगों का भारत और ईस्टइंडीज में भी व्यापार होता था। इनमें से कुछ मालाबार व अन्य स्थानों पर बस गए थे।

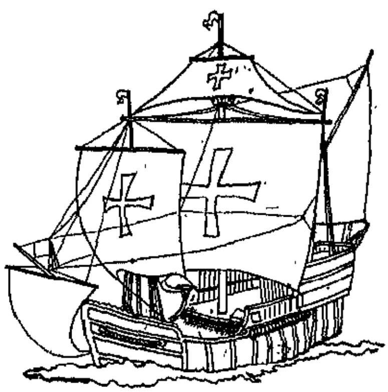
नई भूमि व समुद्रों के खोजी

ईसा के बाद चौदहवीं सदी तक यूरोप, एशिया और अफ़्रीकी समुद्र तट के थोड़े

से इलाके के पार की दुनिया के बारे में बहुत कम जानकारी थी। बाकी संसार, उसके द्वीप और समुद्र एक अज्ञात रहस्य से थे।

चौदहवीं और पंद्रहवीं सदी के दौरान यूरोप में एक नए जीवन का संचार हुआ। लोग जीवन के हर क्षेत्र में एक नयापन खोजने की कोशिशों में लगे हुए थे। जमीन के रास्ते पूर्व की यात्रा करके वापस आए व्यापारी लोग भारत, चीन और ईस्टइंडीज की संपदा के बढ़ा-चढ़ा कर विवरण देते थे। यूरोपीय राष्ट्र समुद्री रास्तों की खोज के लिए बेचैन हो उठे, जिससे कि इन क्षेत्रों की संपदा तक उनकी पहुँच हो सके।

साहसी नाविकों ने इस चुनौती को स्वीकार किया। यूरोप की उस जमाने की सबसे अग्रणी समुद्री ताकत पुर्तगाल ने बार्थोलोम्यू दियाज को भेजा। वह अफ्रीका के पश्चिमी किनारे का चक्कर लगा कर १४८८ में आशा अंतरीप तक ही पहुँच पाया और उसके आगे नहीं जा सका।



५. कोलंबस का सांता मारिया नामक १०० टन वाला जहाज

दियाज द्वारा शुरू किए गए कार्य को वास्को द गामा ने पूरा किया। वह ८ जुलाई, १४९७ को चार छोटे जहाजों के साथ पुर्तगाल की राजधानी लिस्बन से रवाना हुआ। रास्ते में उसके नाविक बीमार पड़ गए और काफी थके हुए थे। वे अपने घर वापिस जाने को बेचैन हो गए थे, लेकिन वास्को द गामा उन्हें आगे बढ़ाता ले गया और अंत में मई १४९८ में कालीकट के तट पर पहुँचा।

वह अपनी यात्रा की शुरुआत के दो वर्ष बाद सितंबर, १४९९ में लिस्बन वापिस पहुँचा था। उसने और उसके साथी नाविकों ने काफी मुसीबतें झेली थीं, लेकिन

उन्होंने वह रास्ता खोज ही निकाला जिसके लिए वे रवाना हुए थे।

कोलंबस एक और साहसी पुर्तगाली था, जो पूर्व के लिए दूसरा समुद्री रास्ता खोजना चाहता था। उसका इरादा यूरोप से पश्चिम दिशा की ओर यात्रा करने और दुनिया का चक्कर लगाते हुए एशिया तक पहुँचने का था। उसका अनुमान था कि उसे अपनी मंजिल तक पहुँचने के लिए करीब पाँच हजार किलोमीटर की यात्रा करनी पड़ेगी।

पुर्तगाल के सम्राट् ने उसके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया, अतएव वह स्पेन चला गया। कुछ समय के बाद स्पेन के सम्राट् ने उसे उसकी इच्छानुसार जहाज़ और नाविक प्रदान कर दिए। अगस्त, १४९२ को कोलंबस अपने सांता मारिया, नीना और पिंटा नामक तीन छोटे जहाजों के साथ यात्रा पर रवाना हुआ।

वह एशिया तक नहीं पहुँच पाया, जैसी कि वह उम्मीद लेकर चला था। उसके सामने अमरीकी महाद्वीप था, हालाँकि तब उसका कोई नाम तक नहीं जानता था। कोलंबस ने १२ अक्तूबर, १४९२ को भूमि के दर्शन किए। बाद में वह मुख्य अमरीकी भूमि के निकट का एक द्वीप निकला। उसने उसे सैन सालवादोर नाम दिया। इस प्रकार एक नई दुनिया खोज निकाली गई।

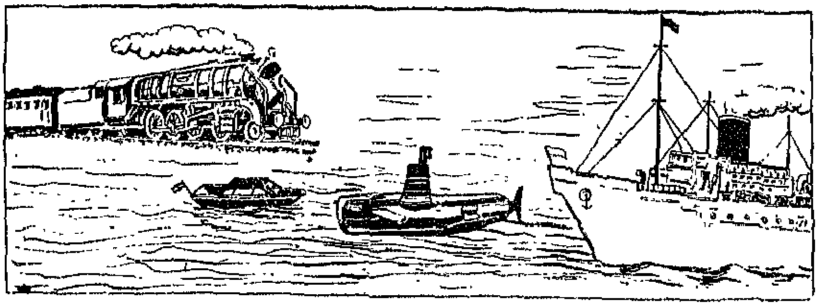
कोलंबस पूर्व के लिए जो नया रास्ता खोजने चला था, वह अब तक अज्ञात था। अतएव स्पेन के सम्राट् ने मैगेलन को यह काम सौंपा। १५१९ में मैगेलन अपनी प्रसिद्ध विश्वव्यापी यात्रा पर रवाना हुआ। उसके साथ सैनअंतोनियो, ट्रिनिडाड, कानसेम्पशन, विक्टोरिया और सान्तियोगो नामक पाँच जहाज थे।

मैगेलन दक्षिण अमरीका तक पहुँच गया और दक्षिण की ओर उसने तब तक यात्रा जारी रखी जब तक कि उसने सँकरा जलमार्ग पार नहीं कर लिया, जिसका कि नामकरण उसके नाम पर हुआ है। वहाँ से वह प्रशांत महासागर में प्रविष्ट हुआ और उसको वर्तमान नाम दिया।

उसके ज्यादातर नाविक और कप्तान उसके विरुद्ध हो गए थे। वे लोग काफी थके हुए थे और आगे जाने से घबराते थे। लेकिन मैगेलन ने उनके साथ कठोरता बरती

और आगे बढ़ता ही गया। इनके सामने खाने का ऐसा अकाल पड़ गया कि चमड़े और लकड़ी के बुरादे से ही गुजारा करना पड़ा।

मैगेलन एक द्वीप के आदिवासियों के साथ हुए संघर्ष में मारा गया। उसके नाविकों ने अपनी यात्रा जारी रखी और २ सितंबर, १५२२ को, अर्थात् ठीक तीन वर्ष बाद पुनः स्पेन की धरती पर पाँव रखा। स्पेन से तीन वर्ष पूर्व रवाना हुए पाँच जहाजों और २३४ नाविकों में से केवल एक जहाज और १८ नाविक ही वापस आ सके।



अध्याय २

भाप का इंजन और जलयान

भाप पर नियंत्रण

तुमने यह कहानी तो सुनी होगी कि किस तरह वाट्स ने एक दिन नाश्ते की मेज पर भाप के कारण उठते-गिरते एक केटली के ढक्कन को देखा और उसके दिमाग में भाप के इंजन के अविष्कार का विचार आया। लेकिन सचाई यह है कि वाट्स के जन्म से भी पहले कोयला खानों से पंप द्वारा पानी बाहर निकालने के लिए भाप की शक्ति का उपयोग होता था। वाट्स ने केवल उस समय प्रचलित इंजनों में सुधार भर किए थे।

ईसा से करीब १२० वर्ष पहले अलेक्जेंड्रिया के हेरो नामक व्यक्ति ने एक ऐसा तरीका निकाला जिससे कि भाप को काम में लाया जा सके। उसने धातु का एक खोखला गोला लिया, जिसमें दो टोंटियाँ लगी हुई थीं। यह गोला अथवा गेंद दो आधारों पर रखी हुई थी और इन आधारों के कोने एक ओर को मुड़े हुए थे। यह आधार अपने मुड़े हुए कोनों पर गोले को विपरीत दिशा में इस तरह उठाए हुए थे

कि गोला इन्हें जोड़ने वाली धुरी पर घूम सकता था। इनमें से एक आधार अथवा छड़ खोखला था, जो कि नीचे रखी एक छोटी सी भट्टी से जुड़ा हुआ था।

खोखले आधार के जरिए भट्टी से भाप गोले में पहुँचाई जाती थी। जैसे ही टोंटियों में भाप निकलना शुरू हुआ कि उसकी प्रतिक्रिया से गोला या गेंद विपरीत दिशा में घूमने लगता था। आपने देखा होगा कि कैसे इसी प्रकार लान पर छिड़काव करने वाले बर्तन की नली, पानी निकालने वाले छेदों अथवा टोंटियों की विपरीत दिशा में मुड़ी होती है।


७. हेरो का भाप का इंजन

इस मामूली क्रिया से हेरो ने भाप की गर्मी से गति पैदा की थी। ठीक यही काम भाप का इंजन करता है। लेकिन हेरो ने इस अविष्कार का उपयोग केवल जादू के खिलौने बनाने में ही किया। इसे व्यवहार में नहीं लाया गया।

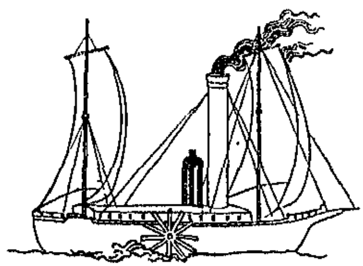
सत्रहवीं सदी तक किसी ने भी शक्ति के इस स्पष्ट स्रोत के उपयोग की बात नहीं सोची थी। १६९३ में टामस सेवरी ने भाप के एक पंप का अविष्कार किया। यह पानी ऊपर उठाने से भाप के द्रव में बदल जाने से उत्पन्न वैकुअम की शक्ति से चलता था। इसके कुछ वर्ष बाद टामस न्यूकोमेन ने एक ऐसा पंप बनाया जिसमें पिस्टन और सिलैंडर की व्यवस्था की गई थी। यह एक भारी और अनगढ़ पंप था किंतु करीब डेढ़ सौ वर्षों तक इसका प्रचलन रहा।

इस काल के अविष्कारकर्त्ताओं के सामने भारी कठिनाइयाँ अच्छे औजारों की कमी के कारण थीं। क्योंकि इनके बिना वे लोग अपने विचारों को वास्तविक रूप नहीं दे पाते थे। इस जमाने में अच्छी तरह के एक पिस्टन अथवा सिलैंडर को ढाल पाना मुश्किल काम था। कारीगर भी कुशल नहीं थे। इसी अकुशल कारीगरी के कारण १७७६ में फ्रांस में बनी वाष्पचालित नाव असफल रह गई।

फिलहाल, १७६९ में जेम्स वाट्स ने अपने भाप के इंजन को सुधारा और पेटेंट कराके प्रस्तुत किया। कई लोगों ने इसका उपयोग नौकाचालन के लिए किया किंतु ज्यादा सफलता नहीं मिली। १८०७ में राबर्ट फुल्टन नामक एक अमरीकी वाष्प-चालित नाव बनाने में सफल रहा और यह नाव मुसाफिर ले जाने में समर्थ थी।

फुल्टन की क्लेरमोन्ट नामक नाव करीब ४० मीटर लंबी और ६ मीटर चौड़ी थी और वह १६० टन भार ढो सकती थी। इसमें प्रयुक्त होने वाला भाप का इंजन इंग्लैंड का बना हुआ था। यह नाव के दोनों तरफ लगे दो चक्कों को संचालित करता था।

अपनी परीक्षण यात्रा में क्लेरमोन्ट ने २४० किलोमीटर की दूरी ३२ घंटों में पूरी की थीं। कुछ समय बाद इसके द्वारा मुसाफिरों को ले जाने की नियमित सेवा शुरू हो गई। इसी के साथ ही वाष्प यातायात प्रारंभ हुआ।


८. फुल्टन की क्लेरमोन्ट नामक नाव

शीघ्र ही और नावों ने भाप चालित इंजनों का इस्तेमाल शुरू कर दिया। लेकिन लोगों को उस समय भाप की शक्ति पर पूरा भरोसा नहीं हुआ था। इसीलिए काफी अर्से तक जलयानों में भाप संचालित इजनों का इस्तेमाल सहायक के रूप में होता रहा।

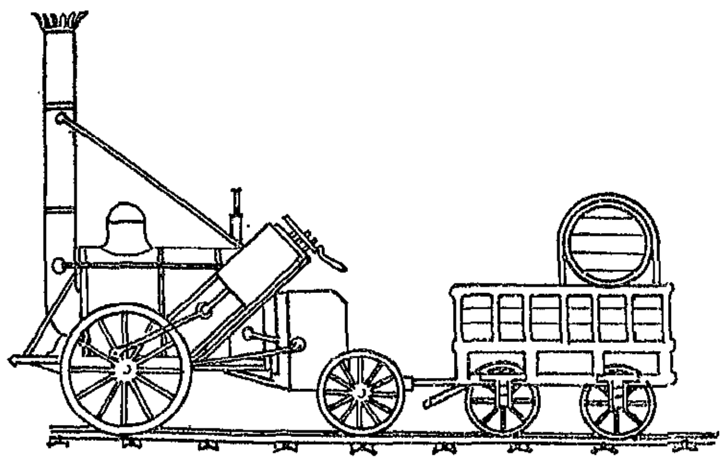
लेकिन अनुभव ने यह साबित कर दिया कि पालदार जलयानों, जो कि निश्चित हवाओं की दया पर निर्भर रहते हैं, की बजाय वाष्प चालित जहाज नियमित और निश्चित सेवा दे सकते हैं। जैसे-जैसे यह विश्वास जमता गया, भारी और ज्यादा ताकत वाले जहाज बनने लगे।

रेल के इंजन का जन्म

इधर जहाजों और नावों में सुधार हो रहे थे, उधर भूमि पर यातायात के लिए भाप की शक्ति के उपयोग की दिशा में भी तेजी से कार्य हो रहा था।

रिचार्ड ट्रेविथिक ने सबसे पहले भाप चालित रेल का इंजन बनाया। १५ फरवरी, १८०४ को इसे साउथ वेल्स की एक खान की ट्राम की पटरियों पर चलाया गया। यह १० टन लोहे की एक गाड़ी और ७० लोगों को करीब १५ किलोमीटर की दूरी तक ले गया। शुरू में यह प्रदर्शन खराब नहीं था, लेकिन खान के मालिक इससे बहुत नाराज हो गए। यह इंजन इतना भारी था कि इससे ट्राम की कमजोर पटरियाँ टूट गई थीं। इस हालत में इंजन को और सुधारने का इरादा छोड़ दिया गया।

फिर भी, कई इंजीनियर और आविष्कारक इस दिशा में आने वाली समस्याओं को सुलझाने की कोशिशों में लगे रहे। स्टीफेन्सन व अन्य लोगों ने इन समस्याओं के निदान प्रस्तुत किए। लेकिन १८२६ में हुई प्रतियोगिता जार्ज स्टीफेन्सन के राकेट नामक इंजन ने जीतकर अपनी उपयोगिता और कीमत सिद्ध कर दी। पहला वाष्प



६. स्टीफेन्सन का राकेट नामक भाप का इंजन

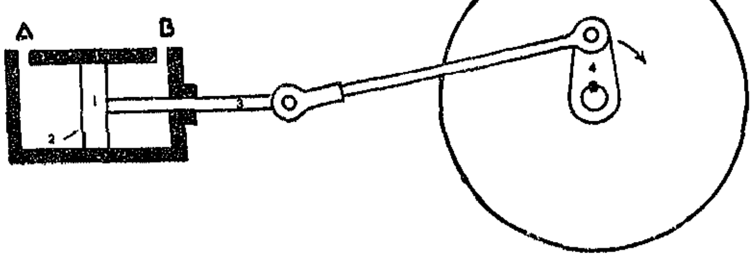
चालित इंजन रेलमार्ग १८३० में मैनचैस्टर से लिवरपूल तक बना। वाष्प इंजन की ख्याति तेजी के साथ बढ़ने लगी। प्रत्येक देश ने अपने यहाँ रेलों का निर्माण शुरू कर

दिया। एक सदी के भीतर संसार के विभिन्न देशों में हजारों किलोमीटर रेलमार्ग बन गए हैं। भारत में १८४९ के दौरान परीक्षणात्मक रूप में बने तीन रेलमार्गों से शुरूआत हुई थी।

वाष्प इंजन के सिद्धांत

जैसा कि बताया जा चुका है, वाष्प अथवा भाप का इंजन जलते हुए कोयले की ताप शक्ति को गति की शक्ति में बदलता है। मुख्य रूप से इसमें पिस्टनयुक्त धातु का एक मजबूत सिलिंडर या बेलन लगा होता है। पिस्टन बेलन के भीतर बाहर चलता रहता है लेकिन भाप को बाहर नहीं निकलने देता है। बेलन या सिलिंडर दोनों तरफ से बंद रहता है।

भाप एक अन्य स्थान पर तैयार की जाती है, जिसे ब्वायलर अथवा भट्टी कहते हैं। इसे भारी तापमान द्वारा गर्म किया जाता है। इसे सिलिंडर के पहले छोर



१०. वाष्प इंजन का सिद्धान्त

१. पिस्टन ३. पिस्टन रौड
२. सिलिंडर ४. क्रैंक (गोलाकार भाग)

(ए) द्वारा प्रविष्ट कराया जाता है और जैसे ही भाप का दबाव बढ़ता है वह पिस्टन को बेलन या सिलिंडर के दूसरे छोर (बी) की ओर धक्का देता है। फिर दूसरे छोर से

पिस्टन को पहले छोर की ओर धक्का दिया जाता है। इंजन में वाल्व पद्धति की व्यवस्था रहती है, जो उचित समय पर अपने आप भाप को आने देता है अथवा रोक सकता है। जैसे-जैसे धक्कों की रफ्तार बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे पिस्टन भी सिलिंडर में तेजी के साथ आगे-पीछे चलता है।

अगली समस्या पिस्टन को आगे-पीछे होने की इस प्रक्रिया को चक्करदार गति देने की है जिससे कि इंजन के पहिए घूम सकें। पिस्टन से जुड़ा हुआ एक धुरा बेलन के दूसरे छोर के मध्य से गुजरता है। यह धुरा एक गोलाकार भाग के किनारे पर लगे लिवर के समूह से संबद्ध रहता है। गोलाकार भाग पहिए के ऊपर होता है। चित्र संख्या १० हमें यह बताता है कि किस तरह पिस्टन के आगे-पीछे होने से गोलाकार भाग घूमता रहता है।

भाप चालित इंजनों का आविष्कार होने के बाद से ही यह पाया गया कि ऐसे इंजन चिकनी पटरियों पर अच्छी तरह दौड़ सकते हैं। पहले के इंजनों में जरा सी गड़बड़ी या तो उनकी गति कम कर देती थी अथवा बिलकुल बंद कर देती थी। कई परीक्षणों के बाद मौजूदा तरीकों की पटरियाँ प्रयोग में लायी जा रही हैं। इन पटरियों को लकड़ी अथवा धातु के पटरों पर बिछाया जाता है। पटरी को मजबूती से जमाए रखने के लिए पत्थरों के टुकड़े पटरों के नीचे और अगल-बगल डाले जाते हैं। पत्थरों के टुकड़ों से जकड़े पटरों का प्रबंध पटरी को हलका-सा लचीलापन दे देता है, जिससे कम धक्के महसूस होते हैं।

इंजन की प्रगति

जैसे-जैसे लोकप्रियता बढ़ती गई, रेल गाड़ियाँ यात्रियों और माल की ढुलाई के लिए एक प्रमुख यातायात का साधन बनती गई। प्रत्येक कारखाने की अपनी स्वयं की अपनी रेलवे साइडिंग होती है जिससे उनके ही यार्ड में सामान चढ़ाने-उतारने का काम हो सके।

समय के साथ ही इंजनों का आकार और शक्ति भी बदलती गई। आज ३०

मी टरसे भी ज्यादा और लंबे और विशालकाय इंजन दौड़ रहे हैं। ३७५० किलोवाट तक की भारी शक्ति वाले यह इंजन प्रत्येक छः किलोमीटर पर एक टन कोयला पचा जाते हैं। महत्वपूर्ण मार्गों पर रेलगाड़ियाँ सैकड़ों किलोमीटर अबाध गति से चल रही हैं। रास्ते में इंजन पानी लेता चलता है। भाप के इंजन ने हमारी काफी अर्से से और बेहतर सेवाएँ की हैं। भाप के इंजन की एक कमी यह है कि वह बहुत गहरा धुआँ छोड़ता है। इससे घने बसे क्षेत्रों की हवा दूषित होती है और जनता के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है। जितना कोयला खर्च होता है, उसकी शक्ति का थोड़ा सा ही अंश इंजन के प्रयोग में आ पाता है। अनुमान है कि ऐसे इंजन के तेरह प्रतिशत शक्ति का ही इस्तेमाल कर पाते हैं, जबकि तेल से चलने वाले इंजन, जिनका कि विवरण आगे दिया जायगा अपने ईंधन की उत्पादित शक्ति का उन्तालीस प्रतिशत भाग प्रयोग में लाते हैं। भाप के इंजनों के यातायात का बड़ा भाग अब हवाई जहाजों और मोटरों की ओर खिचता चला जा रहा है। कई स्थानों पर कोयले की पूर्ति भी घटती जा रही है।

जैसे-जैसे यातायात बढ़ता गया, ज्यादा-से-ज्यादा रेलवे मार्ग बनते गए। शहरी क्षेत्रों में इन नई लाइनों के लिए जमीन प्राप्त करना मुश्किल हो गया। ऐसे मामले में जमीन के भीतर रेल लाइनें बिछानी पड़ीं। मिसाल के तौर पर लन्दन को १८६३ में ही भूमिगत रेल व्यवस्था करनी पड़ी। लेकिन जिन सुरंगों से होकर यह रेलें गुजरती थीं, वहाँ इनके इंजनों द्वारा छोड़े गए भारी धुएँ के कारण दम घुटने वाला वातावरण पैदा हो गया। दूषित वायु निकालने और अच्छी वायु प्रविष्ट कराने की समस्या गम्भीर हो गई। इस कारण १८८४ में इन रेल पथों का आगे विस्तार रोक दिया गया।

इस बीच बिजली का उपयोग तेजी से तरक्की पर था। इसने भाप शक्ति का एक बेहतरीन विकल्प प्रस्तुत किया। १८९० में विश्व की सबसे पहली बिजली की रेल चलाई गई। अगले बीस वर्षों के भीतर इसका तेजी से विस्तार हुआ। इस समय १४२ किलोमीटर भूगर्भीय रेलपथ लंदन में है, जिनमें से १०८ किलोमीटर सुरंगों से होकर गुजरते हैं।

समुद्र विजय

अतलांतक महासागर को पार करने वाला सबसे पहला स्टीमर सावन्नाह था। यह अमरीकी स्टीमर १८१९ में अतलांतक सागर से गुजरा था। सन् १८३८ से पालों का उपयोग बंद हुआ और बाष्प चालित पहला स्टीमर सिरिअए अतलांतक से गुजरा। १८३९ में ग्रेट ब्रिटेन नामक जहाज अतांलतक में चलने वाला पहला वाष्प चालित जहाज़ था, जिसमें पानी काटने के चक्के की जगह पेचों का इस्तेमाल किया गया।

जहाज़ों के आकार बढ़ने के साथ ही उनके ढाँचे लकड़ी की बजाय लोहे के बनने लगे। लोहे का पहला जहाज ग्रेट ब्रिटेन में १८४८ में बना।

जल और थल के नए मार्गों की खोज ने व्यापार की नई दिशाएँ खोल दीं। योरोप की बड़ी समुद्री शक्तियों में व्यापार की होड़ लग गई और कभी-कभी तो उनके बीच भयानक समुद्री लड़ाइयाँ छिड़ जाती थीं। इसके कारण शक्तिशाली नौसेनाओं का जन्म हुआ। बारूद के अविष्कार के साथ ही बड़ी और अच्छीं तोपें भी बनने लगीं। भारी तोपों से लैस युद्धपोत भयानक विनाशकारी शक्ति रखता था।

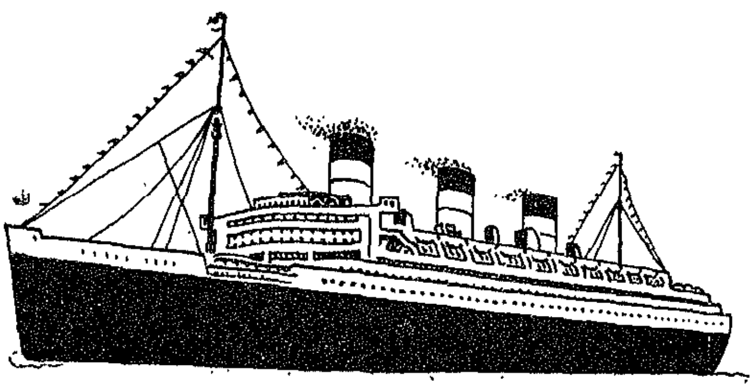
यूरोपीय देशों ने जल्दी ही यह अनुभव किया कि उनकी नौसेनाओं से उन्हें भारी लाभ है। एशियाई देशों के हथियार घटिया किस्म के थे। नई दुनियाँ के मूल निवासियों के हथियार प्राचीन युग के थे। अतएव अच्छे व घातक हथियारों से लैस यूरोपीय देश जहाँ चाहते वहाँ बड़े इलाकों पर कब्जा कर लेते थे और अपने उपनिवेश बना लेते थे। इन उपनिवेशों और साम्राज्यों की संपदा यूरोप की बड़ी शक्तियों के पास भारी मात्रा में सिमटने लगी और उन्हे और बड़े व बेहतर जहाज़ बनाने में काफी मदद मिली।

'सैनिक उपयोग के अलावा व्यापारिक उद्देश्यों के लिए भी जलयानों का विकास किया गया। माल वाहक जहाज माल ढोते थे। समय के साथ ही यात्रीवाहक जहाज़ों का आकार और आराम की सुविधाएँ भी बढ़ने लगीं।

निश्चित मार्ग अथवा दिशा की ओर जाने वाले जहाजों को लाइनर की संज्ञा दी गई। किसी निश्चित मार्ग को न अपनाने वाले जहाजों को ट्रैम्प (घुमंतू) कहा जाता था। लेकिन जब संपन्न व्यक्ति समुद्र की यात्रा का मजा लूटने की इच्छा करते थे, तो निश्चित मार्गों पर चलने वाले जहाज़ उनके लिए उपलब्ध किए जाते थे। आजकल लाइनर शब्द एक बड़े और अत्यन्त आरामदेह जहाज को कहते हैं।

तैरते हुए नगर

सबसे बड़े लाइनर जहाज़ एक छोटे तैरते हुए नगर होते हैं। क्वीन मेरी नामक सबसे बड़ा जहाज अतलांतक महासागर में चलता था। इस जहाज का संक्षिप्त विवरण उन दिशाओं का परिचय दे देगा, जिनके आधार पर जहाजरानी का विकास हुआ है। क्वीन मेरी सन् १९३६ में प्रकाश में आया। यह जहाज ३१५ मीटर लंबा और ३६ मीटर चौड़ा था। इसका वजन लगभग ८० हजार ७७४ टन था। इसमें ९ डेक और ५ सौ प्रथम श्रेणी के कमरे थे। इसमें दो हजार यात्री बैठ सकते थे। इसके कर्मचारियों की संख्या एक हजार थी। रहने के स्थान के अलावा जहाज में भोजन के



११. क्वीन मेरी नामक जहाज

हाल, धुम्रपान के कमरे, वाचनालय, पुस्तकालय, बालरूम नृत्य के हाल, स्टूडियो, नर्सरी, तैराकी के तालाब, टेनिस कोर्ट, व्यायामशाला, स्नानागार, सिनेमाघर, प्रसाधनगृह और दुकानें थीं।

यात्रियों की सभी जरूरतों के बारे में पहले ही सोच लिया जाता था और वे पूरी की जाती थीं। प्रत्येक प्रथम श्रेणी के कमरे में एक टेलीफोन लगा हुआ था। सौ रसोइए मनपसंद भोजन तैयार करते थे। पाँच दिनों की इकतरफा यात्रा के लिए जो सामग्री रखी जाती थी उनमें से कुछ का विवरण इस प्रकार है—

गोश्त २० टन, मछली २० टन, अंडे ७ हजार, चाय और काफी दो हजार किलोग्राम, शकर ५ हजार किलोग्राम, आलू ३० टन, दूध दो हजार लिटर, सब्जियाँ २० हजार किलोग्राम, मक्खन ३ टन, पनीर १ हजार किलोग्राम, सेब और नरंगिया ६ सौ बक्से, मुर्गे और बतखें चार हजार, शराब दस हजार बोतलें, बियर चालीस हजार बोतलें और खनिज जल ६० हजार बोतलें।

इतनी विशाल खाद्य सामग्री रखते हुए भला कोई भूखा रह सकता था।

अन्य वस्तुएँ भी विशाल मात्रा में थीं। जहाज में चीनी मिट्टी और शीशे के एक लाख बर्तन, २६ हजार काँटे, छुरे व चम्मच और एक लाख रूमाल थे। इतनी बृहद सामग्री का हिसाब किताब रखना एक बहुत बड़ी बात रही होगी।

मुसाफिरों की सुरक्षा की उपेक्षा नहीं थी। जहाज में २४ जीवन नौकाएँ थीं जिनकी लंबाई ११ मीटर थी। दुर्घटना के मौके पर यह जीवन नौकाएँ रसोइयों व कर्मचारियों सहित तीन हजार दो सौ पचास व्यक्तियों को ले जाने में समर्थ थीं।

क्वीन मेरी ३० नाट या ५६ किलोमीटर से कुछ ज्यादा प्रतिघंटे की रफ्तार से चल सकता था। जहाज के इंजनों से एक लाख बारह हजार किलोवाट तक बिजली पैदा हो सकती थी।

क्वीन मेरी की सबसे दिलचस्प बात उसके दोनों तरफ से उसे स्थिर रखने के लिए लगे हुए मछली के समान पर (फिन) थे, जो उग्र समुद्र में उसका हिलना-डुलना कम रखते थे। यह जहाज़ की सतह से नीचे लगे हुए थे और ३.३ मीटर लंबे व

२.३ मीटर चौड़े थे। जब समुद्र शांत रहता था और जहाज़ हिचकोले नहीं खाता था तो उन्हें आधा जहाज के ढाँचे के नीचे कर लिया जाता था और उन्हें ऊपर की ओर मुँह करके रखा जाता था। लेकिन समुद्र के उग्र होने पर उनको पूरी तरह फैला दिया जाता था और वे विपरीत दिशा में एक ओर झुके रहते थे। इस प्रकार जहाज़ का डोलना थम जाता था और शायद ही मालूम देता हो।

क्वीन मेरी से भी बड़े जहाज बनाए गए। फ्रांसीसी जहाज नारमंडी और ब्रिटिश जहाज क्वीन एलिजाबेथ कुछ बड़े आकार के थे।

युद्धपोत

हम पहले ही उल्लेख कर चुके हैं कि जहाज़ किस तरह बनाए जाते थे और कैसे उन्हें युद्ध के लिए शस्त्रों से सज्जित किया जाता व किस तरह उन्होंने इतिहास बनाने में मदद पहुँचाई थी। यहाँ विभिन्न प्रकार के युद्धपोतों व अन्य जलयानों के बारे में कुछ कहना असंगत नहीं होगा। इन्हें आकार, संख्या और इनकी तोपों के आकार व उपयोग के उद्देश्य के आधार पर विभिन्न नाम दिए गए हैं। कुछ को विमानवाहक, युद्धक, शत्रु की टोह लेने वाला और अपने बेड़े का रक्षक (क्रूजर), विध्वंसक, पेट्रोल वाहक और सुरंग बिछाने व नष्ट करने वाला आदि नाम दिए गए हैं।

सन् १८५० के प्रारंभिक युद्ध पोतों में पाल के अलावा सहायक के रूप में भाप के इंजन भी लगे होते थे। यह ७७ मीटर से कुछ ज्यादा लंबे होते थे और इनकी रफ्तार करीब ११ किलोमीटर प्रति घंटे थी। क्लिपर नामक हल्के जहाज़ विशेषतौर से गति के लिए बनाए जाते थे। लाइटनिंग नामक ऐसा ही छोटा अमरीकी जहाज़ ३३ किलोमीटर प्रति घंटे की गति से चलता था। १८५४ में पाल अथवा भाप के इंजन के सहारे तीस वर्षों में इस गति तक कोई जहाज़ नहीं पहुँच सका था।

सबसे बड़े जंगी जहाज़ विमानवाहक होते हैं। इनका उपयोग हवाई जहाज़ों के लिए तैरते हुए हवाई अड्डों के रूप में होता है। यह तैरने वाले सबसे विशालकाय जहाज होते हैं। इनके डेक हवाई जहाजों के उतरने व उड़ान भरने की पट्टी का काम देते हैं।

[ह]वाई जहाज़ों के रखने के हैंगर निचले डेक में होते हैं और उड़ान के समय शक्तिशाली [लि]फ्टों के जरिए उन्हें ऊपर के डेक पर लाया जाता है। बम, ईंधन व बारूद व अस्त्र [र]खने के भंडार भी होते हैं। विमानवाहक जहाज़ों में ज्यादा विमान भेदी अस्त्र नहीं [ह]ोते हैं। अतएव इनकी हिफाजत के लिए कई विध्वंसक और क्रूज़र (रक्षक) जहाज [स]ाथ चलते हैं।

जंगी जहाज भारी अस्त्रों से लैस होते हैं और बड़ी से बड़ी तोपें लेकर चलते [ह]ैं। यह तैरते हुए इस्पात के किलों के समान हैं। सबसे बड़ा जहाज २४० मीटर तक [ल]ंबा हो सकता है। इनके साथ अन्य अस्त्रों के अलावा १६ इंची (४०.६ से० मी०) [द]हानों वाली तोपें होती हैं जो ३२ किलोमीटर तक एक टन वजनी गोले फेंक सकती [ह]ैं। इन तोपों से जहाज के पानी की सतह से ऊपर के भाग पर एक वार गोलाबारी [क]रने में हजारों पाउंड का खर्च बैठता है। जंगी जहाजों के इंजनों की विद्युत उत्पा-[द]न क्षमता तीस हजार से साढ़े सैंतीस हजार किलोवाट के बीच और गति सैंतीस से [स]ैंतालीस किलोमीटर प्रतिघंटा होती है। रक्षक या टोही (क्रूज़र) जहाज़ अपेक्षाकृत [छ]ोटे और हल्के रहते हैं और इनकी गति ७६ किलोमीटर प्रतिघंटा या इससे ज्यादा [ह]ोती है।

विध्वंसक जहाज़ों का निर्माण भी गति की दृष्टि से होता है। इनमें तोपों के [अ]लावा, तारपीडो और विमान भेदी तोपें भी होती हैं। यह समुद्र की गहराई में भी [म]ार करने वाले अस्त्रों से लैस होते हैं। इन अस्त्रों को अंग्रेजी में डेफ्ट चार्ज कहते हैं। [य]ह अस्त्र ज्यादा तकातवर विस्फोटक सामग्री युक्त कनस्टर या पीपे होते हैं। जिन्हें [स]मान गति में डूबने के लिए छोड़ा जाता है। यह अपने गिराए जाने के बाद निर्धा-[र]ित समय के भीतर विस्फोट करता है। इस विस्फोट से व्यापक क्षेत्र में पनडुब्बियों [क]ा विनाश हो जाता है।

[प]नडुब्बियाँ

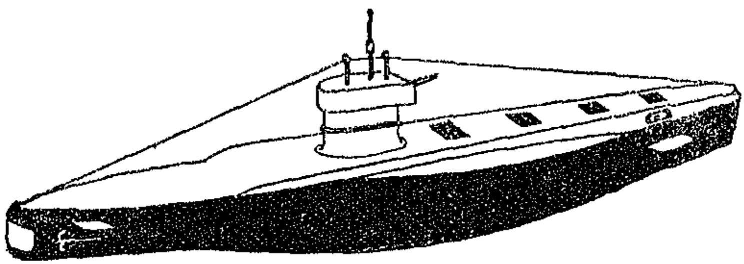
जहाज की यह किस्म अपने आप में एक कमाल है जैसा कि इसका पनडुब्बी

नाम है, यह पानी के भीतर रह सकती है और चल सकती है।

पहली ब्रिटिश पनडुब्बी सन् १९०२ में बनाई गई थी। इसमें छः सदस्यीय कर्मचारियों के रहने का कोई स्थान नहीं था।

दूसरे महायुद्ध में पनडुब्बियों का जमकर उपयोग हुआ। समुद्र में जहाजों को पहुँचने वाली क्षति का तीन चौथाई भाग इन्हीं के कारण था।

स्वाभाविक रूप से पनडुब्बियों का आकार अन्य जलयानों से अलग होता है। सिगार की शक्ल वाली ये पनडुब्बियाँ पानी के अंदर आसानी से चल सकती हैं। कई पनडुब्बियों में ऐसी मीनारें होती हैं जिनमें कि पेरिस्कोप लगे होते। हैं यह एक शीशे का



१२. पनडुब्बी

ऐसा दूरबीन होता है जिसके जरिए पनडुब्बी के पानी के भीतर रहने पर भी समुद्र-तल की चीजें साफ दिखाई देती हैं। हाल की पनडुब्बियों में मीनारों के बजाय एक बड़ा पाल लगा होता है।

पनडुब्बियों में दोहरे बाहरी हिस्से होते हैं जिनके बीच में हवा अथवा पानी के लिए जगह होती है। नीचे का हिस्सा ऐसा मजबूत बनाया जाता है जो सैकड़ों मीटर गहराई में पानी के दबाव को सहन कर सके। साठ मीटर गहराई में पानी का दबाव लगभग प्रति वर्ग सेंटीमीटर छः किलोग्राम होता है।

पानी के भीतर पनडुब्बियों की गति अड़तीस किलोमीटर प्रति घंटा होती है और पानी के ऊपर यह गति उन्नीस किलोमोटर प्रतिघंटा रह जाती है। ये पनडुब्बियाँ डीजल, पेट्रोल, बिजली अथवा आणविक शक्ति से चलाई जा सकती हैं। इनका पूरा विवरण आगे के अध्याय में दिया जा रहा है।

जर्मनी की पनडुब्बियाँ एक ऐसे ट्यूब का इस्तेमाल करती थीं जिसे स्नोरकल कहा जाता था। ये लंबी अवधि तक श्वास प्रक्रिया के लिए प्रयुक्त होता था। यह पनडुब्बियाँ अन्य पनडुब्बियों के विपरीत पानी के भीतर ज्यादा देर तक रह सकती थीं और तेजी से चल सकतीं थीं।

गोता लगाने के लिए पनडुब्बियाँ भारी बोझ अपनी टंकियों में रखती हैं। पानी का भार उन्हें इच्छित गहराई तक डूबने में समर्थ बना देता है। पानी सतह पर आने के लिए यह अपनी भार वाली टंकियों से पानी के वजन को निकाल फेंकती है। युद्ध में पनडुब्बियों का ज्यादातर इस्तेमाल जहाजों को नष्ट करने और सुरंगे बिछाने के लिए होता है।



अध्याय ३

यातायात की सबसे बड़ी समस्या

बिना घोड़ों की गाड़ियाँ

भाप के रेलइंजन की लोकप्रियता के साथ ही लोगों का यह सोचना स्वाभाविक ही था कि सड़कों पर चलने वाले वाहनों में भाप शक्ति का इस्तेमाल किया जाय। जल्दी ही भाप चालित मोटरें बन गईं और इनमें से कुछ तो काफी सफल रहीं। लेकिन जनता आवाज करने और धुआँ छोड़ने वाली गाड़ियों को देख कर डर गई। इन मोटरों में भाप बनाने के लिए ब्वायलर लगा होता था। अधिकारी भी इस भयानक दानव को आजादी के साथ सड़क पर दौड़ते देखना पसंद नहीं करते थे। पास से ऐसी मोटर गुजरते ही घोड़े घबरा जाते थे और गलियों के कुत्ते भौंकने लगते थे।

इसके अलावा इंग्लैंड में कुछ ऐसे भी लोग थे, जिन्होंने रेल और यात्री वाहक बग्घियों में काफी धन लगाया था और इनका धंधा भी खूब चल रहा था। वे इन बिना घोड़ों की गाड़ियों की प्रतिद्वंदिता नहीं चाहते थे। अतएव इन लोगों ने सरकार पर भारी दबाव डाला जिसने मजबूर होकर १८६८ में एक कानून बनाया। इस कानून

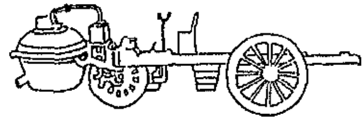
के अनुसार प्रत्येक ऐसी गाड़ी को जिसमें घोड़े न जुते हों तब तक सड़कों पर नहीं चलने दिया जाएगा, जब तक कि उसके ५४ मी० आगे एक लाल झंडी लेकर आदमी न दौड़ रहा हो। कानून ने स्थानीय अधिकारियों को यह अधिकार भी प्रदान कर दिए कि वे शहरों में इन गाड़ियों की रफ्तार ३.२ कि०मी० प्रति घंटा और शहर से बाहर ६.४ कि०मी० प्रति घंटा निश्चित कर दें। सन् १८७८ में इस कानून को थोड़ा-सा संशोधित किया गया। इसके अनुसार गाड़ी के आगे लाल झंडी लेकर चलने की जरूरत नहीं रह गई थी लेकिन एक जिम्मेदार आदमी को गाड़ी के १८ मी० आगे चलना पड़ता था। अंततः नवंबर, १८९६ से यह सारे प्रतिबंध हटा लिए गए। लेकिन इन्होंने इंग्लैंड को लगभग एक दर्जन वर्ष पीछे धकेल दिया था।

इधर जर्मनी और फ्रांस भी कुछ तरक्की कर चुके थे। जर्मनी ने तो पेट्रोल चालित इंजन बना लिया था और इन इंजनों से युक्त गाड़ियाँ वहाँ की सड़कों पर दौड़ रही थीं। फ्रांस ने १८९४ में इस तरह की गाड़ियों की एक प्रतियोगिता आयोजित की, जिसमें १०२ ने भाग लेने की इच्छा व्यक्त की थी, लेकिन वास्तविक प्रतियोगिता में कुल २६ गाड़ियाँ ही दौड़ीं। १८९५ में फ्रांस ने पहली मोटर दौड़ का आयोजन किया जिसमें १२ पेट्रोल चालित और ६ भाप चालित गाड़ियाँ शामिल हुईं। दौड़ की दूरी ११७० कि०मी० रखी गई थी। ११ में ८ पेट्रोल चालित गाड़ियाँ तो मंजिल तक पहुँच गईं, लेकिन भाप चालित ६ में केवल एक ही ऐसा कर सकती।

भाप चालित गाड़ियों के लिए यह एक भारी अपशगुन था। अगले वर्ष हुई दौड़ में कोई भी भाप चालित गाड़ी मंजिल तक नहीं पहुँच सकी। यह एक आखिरी चोट साबित हुई और हमेशा के लिए इसने भाप चालित गाड़ियों का नामोनिशान मिटा दिया।

लेकिन कुछ उत्साही लोग अब भी निराश नहीं हुए थे। इनमें से एक अमरीका के स्टेनली बंधु भी थे। इन लोगों ने स्टेनली स्टीमर नामक अपनी गाड़ी बनाई जो फ्लोरिडा की सन् १९०७ की गति परीक्षण प्रतियोगिता में उतरी थी। प्रतियोगिता में शामिल कोई भी पेट्रोल चालित मोटर १६० कि०मी० प्रति घंटे से ज्यादा गति नहीं दे

सकी जबकि स्टेनली स्टीमर की रफ्तार ३०० कि०मी० प्रति घंटे रही। रास्ते में सड़क का एक उभरा भाग इसके लिए घातक सिद्ध हुआ। वह इससे टकरा कर करीब तीस मीटर दूर जा गिरी और टुकड़े-टुकड़े हो गई।



१४. भाप चालित प्रारम्भिक ट्रक

लेकिन स्टीमर गाड़ी ने गति का जो प्रदर्शन किया था, उसका प्रभाव समाप्त नहीं हो सका। कई स्टीमर गाड़ियाँ तुरंत बिक गईं, हालाँकि उनका व्यापक पैमाने पर उत्पादन कभी नहीं किया गया था। यह गाड़ियाँ तेजी से दौड़ सकती थीं और आसानी से ढालदार सड़कों पर चढ़ सकती थीं। १९१८ में स्टीमर चलाते वक्त हुई एक दुर्घटना ने स्टेनली बंधुओं में से एक की जान ले ली। लोगों को हमेशा यह भय बना रहता था कि इस प्रकार की मोटरें खतरनाक हैं। इस दुर्घटना ने तो उनके भय को सच ही साबित कर दिया। आखिरकार इस योजना को समाप्त ही कर दिया गया।

आंतरिक (दाहक) ऊर्जा इंजन

आंतरिक (दाहक) ऊर्जा इंजन अथवा इंटरनल कम्बस्टशन इंजन एक महत्वपूर्ण अविष्कार था। आज भी मोटरों में इनका उपयोग हो रहा है। इस समय दो प्रकार के इंजन प्रचलित हैं, इनमें से एक पेट्रोल और दूसरा डीजल द्वारा संचालित होता है।

पेट्रोल इंजन के पिस्टन और बेलन (सिलिंडर) भाप चालित इंजन के समान ही होते हैं लेकिन उनका आकार अपेक्षाकृत छोटा रहता है। पेट्रोल इंजन में भाप के ब्वायलर की बजाय एक नई विधा प्रयोग में लाई जाती है, जिसे कारबोरेटर कहते हैं। इनमें पेट्रोल एक छिद्र से होकर कारबोरेटर में पहुँचता है और जहाँ वह भाप की शक्ति में बदल जाता है। एक अन्य छिद्र से कारबोरेटर में पहुँचने वाली हवा के साथ यह भाप मिश्रित हो जाती है। यह मिश्रण सिलिंडर तक पहुँचाया जाता है, जहाँ चिंगारी छोड़ने वाले प्लग से निकली चिंगारियाँ इसे विखंडित कर देती हैं। इस

विखंडन अथवा विस्फोट की शक्ति पिस्टन को आगे की तरफ धक्का मारती है।

डीजल इंजन में कारबोरेटर की बजाय आटोमाइजर का इस्तेमाल किया जाता है। आटोमाइजर में डीजल एक फुहार के रूप में बदल कर सिलिंडर तक पहुँचता है। उसे विखंडित करने के लिए चिंगारियों की जरूरत नहीं रहती है। जब इसका पिस्टन की सक्रियता के कारण पहले से ही काफी दाबी हवा के साथ संपर्क होता है, तो यह स्वयं ही विखंडित हो जाता है।

पेट्रोल और डीजल इंजनों को स्वयं दाहक (इंटरनल कम्बस्टशन) इंजन कहते हैं। इसमें इंजन का प्रज्ज्वलन अथवा दाह-क्रिया (बस्टशन) स्वयं इंजन के सिलिंडर में होती है। इसके ठीक विपरीत भाप के इंजन में, कोयले को, जो ईंधन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है, व्वायलर में भाप पैदा करने के लिए इंजन के बाहर जलाया जाता है।

आंतरिक ऊर्जा अथवा दाहक इंजन का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इसे बिना किसी पूर्व तैयारी के इच्छानुसार सक्रिय किया जा सकता है। भाप के इंजन को चालू करने से पहले भाप को तैयार करना पड़ता है और उसे तब तक गर्म किया जाता है, जब तक कि उसका दवाव उच्चतम सीमा पर नहीं पहुँच जाता है। जैसा कि बताया जा चुका है कि आंतरिक दाहक इंजन अत्यंत दक्ष होते हैं, वे अपने ईंधन द्वारा उत्पन्न शक्ति के ज्यादा भाग का उपयोग कर लेते हैं।

इस प्रकार के इंजनों का न केवल मोटरों में बल्कि जहाजों और रेल इंजनों में भी इस्तेमाल होने लगा है। हर जगह बड़ी तादाद में डीजल के रेल इंजनों का उपयोग हो रहा है।

मोटरकारों का उत्थान

इस बात पर बड़ा विवाद है कि किसने सबसे पहले पेट्रोल चालित मोटरकार बनाई थी। लेकिन यह स्वीकार किया जाता है कि जर्मनी के इंजन ड्राइवर का लड़का कार्ल बेंज पहला आदमी था जिसने १८८४ में इस तरह की मोटरकार बना कर चलाई

थी। उसने जनता के हाथ भी अपनी मोटरें बेची थीं। इस प्रकार वह पहला कार निर्माता और मोटर उद्योग का जनक था। सन् १८८६ के आखीर तक उसकी मोटरें सड़कों पर विश्वास के साथ चलाने के योग्य हो गई थीं। यह मोटर तीन पहियों की होती थी। आगे एक पहिया और पीछे दो पहिए अगल-बगल थे। दो वर्ष बाद इस तरह की मोटरों का निर्यात फ़्रांस और अमरीका को होने लगा। उस समय इसकी गति करीब तेरह कि०मी० प्रति घंटा थी।

इस सिलसिले में एक और नाम का भी उल्लेख किया जा सकता है और वह है जर्मनी का इंजीनियर गोट्टिलेब डेमलर का। उसने १८८५ में विश्व की सबसे पहली मोटरसाइकिल का आविष्कार किया था। उसने मोटरों में भी कई तकनीकी सुधार किए थे। जब उसने अपनी मोटरों का निर्यात फ़्रांस को शुरू किया तो वह बेंज का पहला प्रतिद्वंद्वी बन बैठा। उसके द्वारा किए गए सुधारों में मोटरकारों की गति २४ कि०मी० प्रति घंटा तक पहुँच गई थी।

शीघ्र ही फ़्रांस में भी मोटरें बनने लगीं। इंग्लैंड में पहली मोटर १८९४ में बाहर से मँगाई गई थी। वह बेंज की तीन पहियों वाली गाड़ी थी। १९०१ तक आयात की संख्या बढ़ती गई और निजी लोगों के पास एक हजार मोटरें हो गई थीं।

सन् १८९६ में यातायात प्रतिबंध हटा लिए जाने से जनता की दिलचस्पी बढ़ी और उसने इंग्लैंड में मोटर उद्योग की नींव रखी गई। मोटर उद्योग के इस उत्थान के साथ एक नाम हरबर्ट आस्टिन का भी जुड़ा हुआ है। उसे अपने कार्य के लिए सम्मानित किया गया था और सर की उपाधि भी मिली थी।

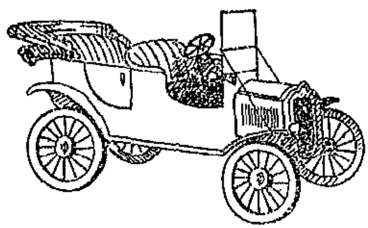
जनता कार

जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं, अमरीका ने सबसे पहले यूरोप से मोटर मँगानी शुरू कीं। बाद में अमरीकी प्रारूपकारों और इंजीनियरों ने अपनी खुद की मोटरें बनाना शुरू किया। दावा किया जाता है कि चार्ल्स ई० डरई ने १८९२ में पहली अमरीकी मोटर तैयार की थी। लेकिन मोटर उद्योग के साथ सबसे महत्वपूर्ण

नाम अमरीका के हेनरी फोर्ड का जुड़ा हुआ है।

डेट्रोइट के इंजीनियर फोर्ड एडीसन के बिजली कारखाने में काम करते थे। उन्होंने मोटरकारों पर अपने परीक्षण शुरू किए। १८९९ में उन्होंने अपनी नौकरी छोड़ दी और १९०३ में चालीस वर्ष की अवस्था में उन्होंने फोर्ड मोटर कंपनी के नाम से अपनी खुद की कम्पनी बनाई। कंपनी की शुरुआत २८ हजार डालर की नकद पूंजी के साथ हुई। इस पूंजी में १०० डालर का हिस्सा लेने वाली एक महिला को लाभांश के रूप में ९५ हजार डालर मिले थे। १९२६ में जब फोर्ड ने अन्य लोगों के शेयर खरीदे तो उन्हें इस महिला के हिस्से की दो लाख साठ हजार डालर कीमत अदा करनी पड़ी थी।

फोर्ड ने अपने शब्दों में जनता की मोटरकार, सस्ती कीमतों पर बेचने के लिए तैयार करनी शुरू की। उनका टी माडल जल्दी ही काफी लोकप्रिय हो गया। कीमत कम रखने के लिए फोर्ड ने व्यापक उत्पादन का तरीका निकाला। उत्पादन की सतत प्रक्रिया जारी रखने के लिए मोटर के प्रत्येक भाग की अलग-अलग उत्पादन शाखाएँ कायम की गईं। प्रत्येक शाखा को एक भाग के उत्पादन का कार्य सौंपा गया था। कच्चे माल से शुरू होकर तैयार मोटर की शाखाओं तक यह प्रक्रिया चलती थी। निर्माण कार्य इतना समय नियन्त्रित था कि प्रत्येक पुर्जा और भाव ठीक वक्त पर अंतिम शाखा तक पहुँच जाता था। अंतिम शाखा से हजारों तैयार कारें रोज निकलने लगीं।



१५. १९०९ में बनी फोर्ड की टी-माडल कार

हेनरी फोर्ड उत्पादन और व्यापारिक प्रबंध के अग्रदूत थे। वे अपने कर्मचारियों को बेहतर वेतन देते थे और अन्य लोगों के मुकाबले उनके साथ अच्छा बर्ताव करते थे। बाद में उन्होंने अपनी अगाध संपति से जनता के कल्याण और विकास के लिए विश्व भर में फोर्ड संस्थान कायम किए।

इस तरीके के उपयोग का नतीजा यह हुआ कि फोर्ड की टी-माडल कार १९२४

में दो सौ नब्बे डालर के हिसाब से बिक रही थी और प्रत्येक वर्ष बीस लाख मोटरें तैयार होने लगी थीं।

फोर्ड के उदाहरण ने इंग्लैंड के एक मोटर निर्माता विलियम मौरिस को भी यही तरीका अपनाने की प्रेरणा दी। प्रथम विश्व युद्ध के बाद उन्होंने भी बड़े पैमाने पर उत्पादन शुरू किया और उनकी मौरिस माइनर कार सौ पाउँड की दर से बाजार में आई।

मौरिस ने अपने जीवन की शुरुआत एक साइकिल एजेंट के रूप में की थी और सर की उपाधि पाने के बाद वे लार्ड नफील्ड बन गई।

आधुनिक उतावलापन

तबसे सभी मानव आवश्यकताओं को सतुष्ट करने वाली विभिन्न प्रकार की मोटरें तैयार हुई हैं। 'जहाँ एक व्यक्ति या छोटे परिवार के लिए मोटरसाइकिलें स्कूटर और छोटी कारें बनी हैं, वहीं दूसरी तरफ धनी व्यक्तियों व मोटर दौड़ के शौकीनों की मनपसंद गाड़ियाँ भी तैयार हुई हैं। शहरों और ग्रामीण इलाकों के उन लोगों को, जो स्वयं अपनी कार रखने की स्थिति में नहीं हैं, बसें एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने लगी हैं। ट्रक और लारियाँ माल की ढुलाई करती हैं। यह वाहन रेलवे के व्यवसाय का एक बड़ा हिस्सा अपने कब्जे में करती जा रही है। ट्रक भंडार-गृह से माल लेकर उसे सीधे गंतव्य स्थान तक पहुँचा देते हैं। इससे पूरे मार्ग में माल को जगह-जगह चढ़ाए उतारे जाने की जरूरत नहीं होती, जबकि रेल द्वारा भेजे गए माल में ऐसा संभव नहीं है। माल की ढुलाई की प्रक्रिया में उसे पहुँचने वाली क्षति के लिए रेलवे काफी बदनाम है। हल्की और टूट सकने वाली चीजें भी ट्रकों द्वारा सुरक्षा के साथ भेजी जा सकती हैं, यह बात दूसरी है कि किराया कुछ ज्यादा लगता है।

इस सदी में निजी कार ने जीवन में एक क्रांति ला दी है। प्रत्येक देश में लाखों मोटरकारों की बाढ़-सी आ गई है और प्रत्येक वर्ष बनने वाली लाखों कारें इस बाढ़ में और सहयोग दे रही हैं। निजी कारें, नियमित व्यापारिक यातायात की पहुँच से बाहर

जगहों तक, लोगों को ले जा सकती हैं। वे लोगों को ऐसे प्राकृतिक दृश्यों का आनंद दिला सकती हैं, जो आमतौर से दुर्लभ होते हैं। निजी यातायात हमारे जीवन के साथ ऐसा घुलमिल गया है कि वह एक आदत बन गया है। वह अब आदत के दायरे से निकल कर एक उतावलापन अथवा सनक की हद तक पहुँच गया है। हम इनके इस्तेमाल पर ज्यादा जोर देते रहते हैं, जबकि इनसे ज्यादा पैदल चलना बहुत ही आसान और समय की बचत है।

इस हालत ने हमारी सड़कों पर भयानक अवरोध और भीड़भाड़ पैदा कर दी है। महत्वपूर्ण शहरों की सड़कों पर तो मोटरों की कतारों के कारण सुरक्षित और पैदल चलना मुश्किल हो गया है। लेकिन निजी कारें रखने की प्रवृत्ति बढ़ती ही जा रही है और साथ ही बढ़ रही हैं हजारों सड़क दुर्घटनाएँ। प्रत्येक वर्ष बड़ी तादाद में लोग अंगविहीन होते हैं अथवा मरते हैं।

जैसे वक्त गुजरता जाता है, वैसे ही मोटरें और ज्यादा सुरक्षित बनाई जा रही हैं। दुर्घटना रोकने एवं दुर्घटना होने के अवसर पर चोट से बचने के तरीके खोजे जा रहे हैं। ऐसे दरवाजों, जो मोटर उलटने पर न खुल सकें, आघात पड़ने पर न टूटने वाले शीशों, स्टीयरिंग की विशेष डिजाइनों और सीटों का परीक्षण हो रहा है और उन्हें मोटरों में लगाया जा रहा है। लेकिन मानव.प्रकृति ही अबाध गति से प्रत्येक वर्ष दुर्घटनाओं का कारण बनती जा रही है।

सबसे बड़ी समस्या

थकावट, उनीदापन, चिंता और नशा ड्राइवर अथवा चालक की नजर मंद कर देती है और उसकी विचार शक्ति पर भी असर पड़ता है। इस तरह के चालक सड़क पर चलते समय खतरनाक होते हैं।

अनाप-शनाप चलाने वाले, तेज गति के प्रेमी और वे लोग जो अच्छी स्थिति में न होने पर भी मोटरें चलाते हैं, केवल दुर्घटनाओं के जिम्मेदार नहीं हैं, बल्कि बिना रुके लंबी दूरी तय करने से उत्पन्न थकावट भी एक कारण है। इसका एक दिलचस्प

उदाहरण नीचे दिया जा रहा है, जिससे यह मालूम हो जाएगा कि किसी पर कभी क्या गुजर सकती है।

एक ड्राइवर ने अपना किस्सा यों बताया कि एक बार वह बहुत ही अच्छे और सीधे राजमार्ग पर गाड़ी चला रहा था। सड़क पर अन्य मोटरों की भीड़-भाड़ नहीं थी। वास्तव में उसके आगे जाने वाली कार काफी दूर थी और उसका आकार दूरी के कारण छोटा लग रहा था। वह उस गाड़ी के आगे जाने का इरादा नहीं रखता था, अतएव आराम से गाड़ी चला रहा था। इन परिस्थितियों में दुर्घटना एक तरह असंभव ही कही जाएगी। लेकिन जब ड्राइवर ने नजर डाली तो उसे अगली मोटर का आकार प्रत्येक क्षण बड़े से बड़ा दिखाई देने लगा। वह इतना भयभीत हो गया कि अपने होश खो बैठा। घबराहट में वह आवाज देने और हाथ हिलाने लगा लेकिन यह सब व्यर्थ सिद्ध हुआ और अगली कार से उसकी टक्कर हो गई। दुर्घटना में वह मरते-मरते बचा।

पाठक आसानी के साथ समझ सकते हैं कि क्या बात हुई होगी। पीछे वाली कार का ड्राइवर लापरवाह हो गया था और उसने जरा ज्यादा जोर से एक्सीलेरेटर (गति बढ़ाने का पुर्जा) पर पाँव रख दिया होगा। उसे यह मालूम नहीं हो रहा होगा कि उसकी मोटर गति पकड़ती जा रही है। आने वाली दुर्घटना के आसन्न खतरे से वह अपना मानसिक संतुलन गँवा बैठा था और उसे अपनी खुद की भूल का अहसास नहीं हो रहा था कि एक्सीलेटर पर से पाँव हटा लिया जाय। वह क्षण भर के लिए इतना हताश हो गया था कि उसे यह समझ में ही नहीं आया कि अगर जरा-सा पैर उठा लिया जाय तो दुर्घटना बचाई जा सकती है।

इस मानव प्रवृत्ति को रोकने के लिए एक अनोखा तरीका सोचा गया है। राजमार्गों पर मोटरों को विद्युतचालित (इलैक्ट्रानिक) यंत्रों द्वारा नियंत्रित किया जाय। प्रत्येक सड़क के बीच में बिछी विद्युतयुक्त धातु की एक पट्टी का संबंध नियंत्रक यंत्र से कायम रखा जाय। इस तरीके से मोटरकार बिना किसी गलती के राजमार्ग पर चलती रह सकेगी। इंफ्रारेड यंत्र मोटर को दूसरी मोटर से एक निम्नतम निश्चित

दूरी से ज्यादा पहुँचने पर उसकी गति कम कर सकेगी अथवा उसे अपने आप रोक देगी।

मोटर में बैठे लोग इन तरीकों के कारण निश्चित होकर यात्रा कर सकेंगे और मोटरों में ड्राइवरों को कुछ करने की जरूरत नहीं पड़ा करेगी, बशर्ते उन्हें किसी दूसरी सड़क से न गुजरना हो, जहाँ ऐसी व्यवस्था नहीं है। ठीक समय पर मोटर में बजने वाली घंटी ड्राइवरों को इस बात का संकेत देगी कि वे अब अपनी मोटर काट कर आगे ले जा सकते हैं लेकिन राजमार्गों को ऐसे यंत्रों से सज्जित और नियंत्रित करने में काफी पैसा लगेगा। इसके अलावा इस तरीके को सामान्य बनाने में काफी समय लग जाएगा।

मोटरों के कारण उत्पन्न केवल यही समस्याएँ ही नहीं हैं। मोटरों के लिए बड़ी खर्चीली सड़कें और पुलों की जरूरत पड़ती है। मोटरों के लिए राजमार्ग ऐसे बनाए जाते हैं जहाँ वे दो सौ चालीस कि०मी० प्रति घंटे तक की रफ्तार से गुजर सकें। इन सड़कों को कोई दूसरी सड़क या रेल मार्ग न काट सके। जहाँ सड़के कटती हों वहाँ उन्हें या तो ऊपर पुल बना कर अथवा सुरंगों के जरिए गुजारने की व्यवस्था करनी पड़ती है। राजमार्गों और पुलों के निर्माण व पुरानी सड़कों व पुलों के रखरखाव पर खर्चा मोटरों की तादाद के साथ तेजी से बढ़ता जा रहा है। इसके अलावा आबादी बढ़ने के साथ ही नई सड़कों, पुलों व सुरंगों के निर्माण के लिए जमीनें प्राप्त करना मुश्किल होता जा रहा है। शहरी क्षेत्रों में यह समस्या अत्यंत विषम है। पुराने शहर जिस समय बसे थे उस समय यातायात की स्थिति दूसरी थी। मौजूदा सड़कों को दोनों ओर से विशाल इमारतें घेरे रहती हैं, इनमें से कुछ राष्ट्रीय व कुछ ऐतिहासिक महत्व की होती हैं। इन्हीं बातों व अन्य कारणों से मौजूदा सड़कें और ज्यादा चौड़ी नहीं की जा सकती हैं।

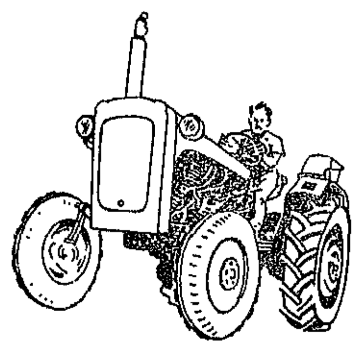
आधुनिक युग में मोटरों के बेतहाशा बढ़ते हुए उपयोग ने इसी तरह की कई समस्याएँ पैदा कर दी है। इन्हें कैसे हल किया जाएगा अथवा हल किया जा रहा है, इसका विवरण अगले अध्याय में दिया जा रहा है। वैसे मोटरें यातायात परिवार की सबसे ज्यादा समस्याजनक संताने हैं।

युद्ध उपयोगी वाहन

पेट्रोल और डीजल धरती पर युद्ध के समय यातायात में काफी उपयोगी सिद्ध हुए हैं। जीपें, हल्का सामान ढोने वाली गाड़ियाँ, ट्रक, एंबुलेंस, तोपवाहक गाड़ियाँ व अन्य प्रकार की गाड़ियों का आम प्रयोग हो रहा है। कुछ विशेष प्रकार की गाड़ियाँ केवल फौजी आवश्यकताओं की दृष्टि से ही बनाई गई है।

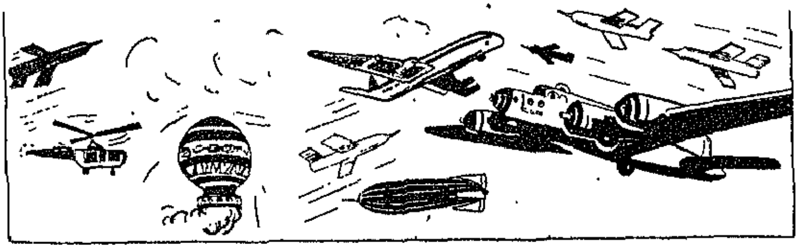
एम्फीवियन नामक ऐसा वाहन बना है जो जमीन और पानी पर समान रूप से चल सकता है। इसका निचला हिस्सा नाव की शक्ल का होता है, जिससे यह आसानी के साथ पानी पर चल सकता है।

पता चला है कि रोलीगन नामक एक और वाहन तैयार हुआ है और फौजी उपयोग के लिए उसका परीक्षण किया गया है। इसमें टायरों की जगह हवा भरे भारी थैले लगाए गए हैं, जिनका दबाव बहुत ही कम है। यह दावा किया गया है कि इस प्रकार के वाहन बिना किसी कठिनाई के छोटी पहाड़ियों और अवरोधों को पार कर सकते हैं। इसका भार व्यापक क्षेत्र में समान रूप से फैला रहता है जिससे कि यह आदमी को बिना चोट पहुँचाए उसके ऊपर से गुजर सकता है।



१६. ट्रैक्टर

हर दृष्टि से फौज के लिए महत्वपूर्ण वाहन टैंक होता है। अपने चालकों को सामान्य गोलाबारी से बचाने के लिए यह भारी बख्तरों से लैस होता है और इसमें बड़ी क्षमता वाली तोपें लगी होती हैं। टैंक चलता हुआ एक छोटा दुर्ग कहा जा सकता है जो अपने आस-पास भारी विनाश ला सकता है। इसमें नीचे की तरफ दाँतीदार ट्रैक्टर चैन या जंजीर लगी होती है, जिस कारण यह ऊबड़-खाबड़ और दलदली इलाकों में आसानी से चल सकता है। दूसरे विश्व युद्ध में टैंकों ने भारी भूमिका अदा की थी।



अध्याय ४

वायु और अंतरिक्ष में

आसमान छूने की लालसा

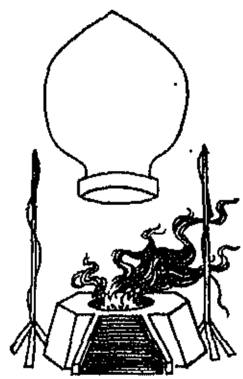
मनुष्य ने आसमान में पक्षी की तरह उड़ने की कल्पना हमेशा से की है। भूमि पर जीवन के कठिन और उसका बोझ सा बन जाने से उसका ऐसा सोचना स्वाभाविक ही था। वह सोचता है कि आसमान में पर फैला कर पीछे सारी चिंताएँ और परेशानियाँ छोड़कर उड़ना कितना अच्छा लगेगा या हो सकता है मनुष्य में विद्यमान किसी दैवी शक्ति ने उसे ऊपर उड़ान भरने की प्रेरणा दी हो। हर प्रकार से संतुष्ट और समृद्ध व्यक्ति भी अपने जीवन को खतरे में डाल कर कुछ ऊँचे और महान कार्य कर गुजरने की सोचता रहता है।

एक प्राचीन यूनानी कहानी है कि एक वास्तुकार डेडालस ने दो जोड़ा पर अपने और अपने लड़के के लिए बनाए थे। कहा जाता है कि यह पर उनके कंधों पर मोम द्वारा जमाए हुए थे। डेडालस ने अपने लड़के इकारस को सावधान किया था कि सूर्य के ज्यादा नजदीक नहीं जाना क्योंकि इससे मोम के पिघलने और परों के अलग हो जाने

का खतरा है। इकारस को संभवतः अधूरे काम पर विश्वास नहीं था। वह उड़ता हुआ सूर्य के नजदीक पहुँच गया। जैसा कि उसके पिता ने पहले ही चेतावनी दे दी थी, उसके पर अलग हो गए और वह आसमान से भूमि पर गिर कर मर गया।

यह स्वाभाविक बात है कि अपनी पहली उड़ान की लालसा में मनुष्य ने पक्षियों को आधार माना हो और शायद उसे यह भरोसा हो कि सिर्फ परों द्वारा ही आसमान की ऊँचाईयों तक पहुँचा जा सकता है। लेकिन बाद में विचारकों ने समस्या को वैज्ञानिक ढँग से लिया। फिलहाल जल्दी ही उन्हें मालूम हुआ कि बिना किसी उचित शक्ति का आधार लिए वे कुछ नहीं कर सकते हैं। कहा जाता है कि पंद्रहवीं सदी का ल्योनार्दो द विंसी नामक इटालियन चित्रकार एवं विश्व में पहला हवाई जहाज निर्माता बन गया होता, यदि उसके जमाने में स्वयं दाहक इंजनों (कम्बस्टशन) का आविष्कार हो चुका होता।

जमीन से हवा में ऊपर पहुँचने का पहला साधन मानव ने गुब्बारा खोजा। यदि एक हल्के थैले में हवा से भी हल्की गैस भर दी जाय, तो गुब्बारा उसी प्रकार ऊपर उठ जाता है जिस प्रकार गहराई में छोड़ी गयी डाट पानी द्वारा ऊपर धकेल दी जाती है। कोई साधन जिसमें यह सिद्धांत इस्तेमाल किया गया हो हवा से भी हल्की मशीन कहा जाता है।



१८. मौन्टगोल्फर का गुब्बारा

पहला गुब्बारा १७८३ में फ्रांस के मौंटगोल्फर बंधुओं ने छोड़ा था। उनका गुब्बारा कागज का एक विशाल थैला था। उसे आग के ऊपर उठाए रखा गया था और जैसे ही उसके अंदर मौजूद हवा गर्म हुई, वह हल्का होकर ऊपर उड़ चला। मौन्टगोल्फर का गुब्बारा तीन सौ मीटर तक ऊपर गया था।

सबसे हल्की हाइड्रोजन गैस की खोज ने गुब्बारों को ज्यादा लोकप्रिय बना

दिया। हाईड्रोजन युक्त गुब्बारे कई किलोमीटर ऊपर पहुँच सकते हैं।

प्रसिद्ध वैज्ञानिक गे लूज़ाक इसी तरह के एक गुब्बारे के जरिए ऊपर उड़ा था। गुब्बारे में हाइड्रोजन गैस भरी हुई थी और लूज़ाक गुब्बारे में लटकती हुई एक डलिया में बैठकर ऊपर गया था। उसने पहला प्रयास १८०४ में, अपने एक युवक साथी के साथ चार किलोमीटर तक की उड़ान भर कर किया था। बाद में वह अकेले ही ६.४ किलोमीटर ऊपर गया और विभिन्न स्तरों पर उसने वातावरण व हवा के दबाव का माप लिया। यह एक साहसी कार्य था, क्योंकि उसे हमेशा हवाओं की दया पर निर्भर रहना पड़ा था।

हवाई जहाज

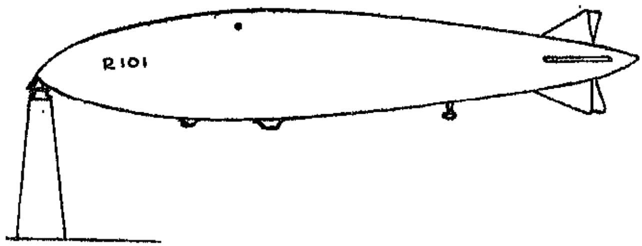
गुब्बारों के साथ एक छोटा इंजन लगाने के प्रयास भी किए गए, जिससे कि उसे इच्छित दिशा की ओर ले जाया जा सके। ऐसा होने पर गुब्बारा पूरी तरह हवाओं दया पर निर्भर नहीं रह सकेगा। यह विचार अमल में आया और इसी ने हवाई जहाज़ों को जन्म दिया।

सिगार की शक्ल के भी यान बनाए गए, जो हल्की धातु के बने होते थे। जर्मनी का जेपलिन यान हिन्डनबर्ग विशाल आकार का था। यह लंबाई में लगभग दो सौ पैंतालीस मीटर और चौड़ाई में अधिकतम चालीस मीटर था। इसमें हाइड्रोजन गैस भरी रहती थी और यह दो सौ पैंतीस पाउंड तक का वजन उठा सकता था। इसमें पचास मुसाफिर व साठ कर्मचारी बैठ सकते थे।

लेकिन हाड्रोजन अति ज्वलनशील गैस होती है। हिन्डनबर्ग ने कई सफल यात्राएँ की थीं, लेकिन १९३७ में आग लगते हुए उसे जलकर भस्म होने में कोई ज्यादा वक्त नहीं लगा था। इस दुर्घटना में पैंतीस व्यक्ति मारे गए थे।

इससे ज्यादा बदकिस्मत दो सौ सैंतीस मीटर लंबा एक ब्रिटिश यान था। इसमें सौ व्यक्तियों के बैठने, खाने और सोने की पहले दर्जे की व्यवस्था की गई थी। इसकी गति एक सौ पाँच किलोमीटर प्रति घंटे की थी। उसने ४ अक्तूबर, १९३० को अपनी

पहली उड़ान भरी और फ्रांस में जा कर ध्वस्त हो गया। उसमें रखी पचास लाख क्यूबिक फुट हाइड्रोजन ने तुरंत आग पकड़ ली और नब्बे मीटर ऊँची लपटें उठने लगीं। कुल चौवन व्यक्तियों में से छः ही बच पाए थे।



१६. यान

इसी तरह कई दुर्घटनाओं ने हवाई जहाज़ों के अंत का संकेत दिया। हवाई जहाज़ का १६०६ में ही अविष्कार हो चुका था किंतु यह हवा से भी भारी होते थे। हालाँकि यह तेजी से तरक्की कर रहे थे किंतु जनता को इनकी लंबी और लगातार उड़ान भरने की क्षमता में विश्वास नहीं हो पाया था। इसकी बजाय वे गुब्बारों वाले यान संभवत: इसलिए पसंद करते थे कि इंजन की खराबी के बावजूद वह जमीन से टकरा कर ध्वस्त नहीं हो सकता था।

प्रथम विश्व युद्ध में इंग्लैंड पर हवाई हमलों के लिए जर्मनी ने दोनों ही तरह के यानों का इस्तेमाल किया था। लेकिन बड़े जहाज़ विमान भेदी तोपों का निशाना आसानी से बन जाते थे। इसीलिए इंग्लैंड ने कई जहाज मार गिराए जिसके कारण जर्मनी को हवाई हमला बंद कर देना पड़ा।

हवाई जहाज़ों के उत्थान के साथ ही गुब्बारों व गैसयुक्त यानों की उपेक्षा की जाने लगी। आजकल गुब्बारों का प्रयोग केवल ऊँचाइयों पर यंत्रों सहित मौसम संबंधी जानकारी प्राप्त करने के लिए होता है। छोटे यानों का प्रयोग पनडुब्बी विरोधी अभियानों में किया जा रहा है। लेकिन इनमें अब हाइड्रोजन गैस नहीं भरी

जाती है। ये हिलियम गैस का इस्तेमाल करते हैं जो हाइड्रोजन से भारी तो जरूर होती है, लेकिन उड़ानों के उद्देश्य के लिए यह अपेक्षाकृत हल्की होती है। इसके अलावा हीलियम एक ऐसी गैस है जो ज्वलनशील नहीं है।

ग्लाइडर और हवाई जहाज़

ग्लाइडर हवाई जहाजों के पूर्वज हैं। वे इंजन विहीन होते हैं और हवा की लहरों के उतार-चढ़ाव से उड़ते रहते हैं। आमतौर से वे जमीन से कुछ फुट ऊपर थोड़ी दूरी तक उड़ सकते हैं। अनुकूल परिस्थितियाँ होने पर कुशल ग्लाइडर चालक छत्तीस घंटों तक हवा में रह चुके हैं। ग्लाइडरों का वे छ: सौ चालीस किलोमीटर दूर अठतालीस हजार मीटर की ऊँचाई तक उड़ा कर ले गए हैं।

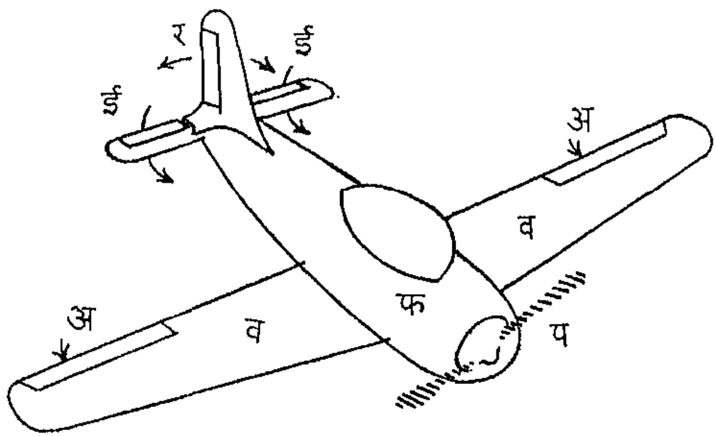
ग्लाइडर की उडान में जर्मनी के ओटो लिलीन्थाल का नाम काफी मशहूर है। उसकी मृत्यु १८९६ में हो गई थी, जबकि ग्लाइडर पर से वह अपना नियंत्रण खो बैठा था। फ्रेंच, ब्रिटिश और अमरीका के उत्साही ग्लाइडर चालकों ने भी ग्लाइडरों के प्रयोग और उनमें सुधार किए हैं। हवाई जहाज़ के अविष्कारकर्त्ताओं के रूप में आगे चलकर मशहूर होने वाले राइट बंधुओं ने भी ग्लाइडरों का प्रयोग किया था। उन्होंने इसमें कुछ सुधार भी किए।

ग्लाइडरों से हवाई जहाज़ों तक की यात्रा आगे बढ़ने की एक स्वाभाविक प्रक्रिया थी। एक पादरी के लड़के ओरोविले और विलबर राइट साइकिल की एक दुकान करते थे। उन्होंने ग्लाइडर में नौ किलोवाट का एक इंजन लगाया था और उसमें पंख लगाए थे।

पहली उड़ान उन्होंने १७ दिसंबर, १९०३ में भरी थी। बारह मिनट के भीतर करीब छत्तीस मीटर तक उड़ान की। उसी दिन चौथी कोशिश में उनसठ सेकिंडों में दो सौ उनसठ मीटर तक उड़ान की। यह ग्लाइडर एक कमजोर हल्की मशीन थी, जिसमें पंख लगे हुए थे और ऊपर मखमल तना हुआ था। इसका ढाँचा लकड़ी का था। इसने हवाई यात्रा का मार्ग खोला।

तबसे लगातार हवाई जहाज के सामान और प्रारूपों में सुधार होते रहे और लगभग बीस वर्ष बाद पहली पूर्ण धातु की मशीन सामने आई।

जैसा कि कहा जा चुका है कि हवाई जहाज हवा से भारी मशीन होती है, किंतु उसे ऊपर उठने के लिए किसी गैस की जरूरत नहीं पड़ती है।



२०. हवाई जहाज के भाग

अ : एलेरोन्स ई : एलेवेटर
र : रडर प : प्रापलर
व : पंखे फ : फ्यूज़लैज

चित्र २० में हवाई जहाज के आवश्यक भाग दिखाए गए है। 'र' उसका रडर और पंखों 'व' के साथ यह हवाई जहाज को उड़ान के समय हवा में स्थिर रखता है। 'प' उसका प्रापलर या अगले पंखे हैं जो इंजन से चलते हैं और उसे आगे बढ़ने की ताकत देते हैं। इ उसके एलेवेटर हैं, जो उसे ऊपर उठने या नीचे उतरने में मदद करते हैं अ अर्थात् एलेरोन्स उसके पंख के भाग होते है। उनका झुकाव इच्छित दिशा में जहाज़ को दाएँ या बाएँ किसी भी तरफ मोड़ सकता है।

हालाँकि जहाज़ों ने तेजी से तरक्की की थी, लेकिन जनता उन पर विश्वास करने से घबराती थी। वह काफी अर्से तक अपनी दूर की यात्राएँ गैस चालित यानों से करती रही।

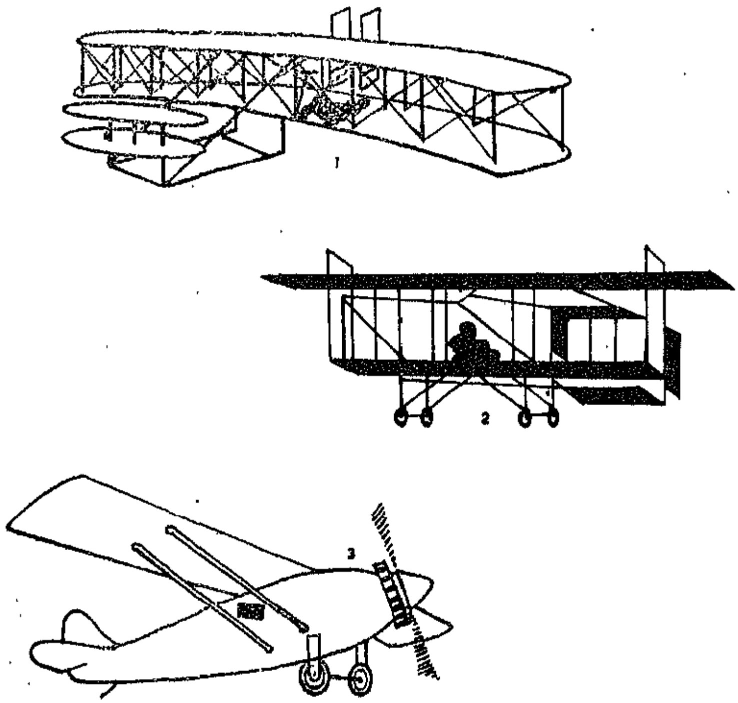
लिन्डबर्ग की उड़ान

१९२७ में अतलांतक महासागर पर लिन्डबर्ग द्वारा की गई ऐतिहासिक उड़ान ने ही हवाई जहाज़ के प्रति लोगों में विश्वास पैदा किया। इसने लोगों को दिखा दिया कि मुश्किल परिस्थितियों में लंबी यात्राएँ इसके द्वारा की जा सकती हैं।

चार्ल्स ए लिन्डबर्ग का जन्म १९०२ में हुआ था। बचपन से ही उसका दिमाग मशीनी कार्यों की तरफ झुका हुआ था और उड़ान का शौकीन था। वो १९२४ में फ्लाइंग कैडेट और १९२६ में व्यावसायिक पायलट बना।

लिन्डबर्ग की देखरेख में स्प्रिट आफ सेन्ट लुई नामक जहाज़ बना, जिसमें बठ कर वह अतलांतक सागर पार करना चाहता था। जहाज़ के बन जाने के बाद उसने उसका अच्छी तरह परीक्षण व जाँच की।

जब लिन्डबर्ग ने न्यूयार्क से पेरिस तक उड़ान भरने की घोषणा की तो लोग आश्चर्यचकित हो गए। इससे कुछ अर्सा पहले दो फ्रांसीसियों ने पेरिस से न्यूयार्क जाने की कोशिश की थी किंतु उनका दुखद अंत हुआ। लिन्डबर्ग ने अकेले ही यह यात्रा करनी चाही थी। २० मई की सुबह सात बजकर बावन मिनट पर न्यूयार्क से लिन्डबर्ग ने अपनी यात्रा का शुभारंभ किया। वह अपने साथ यात्रा के लिए पर्याप्त पेट्रोल भी लिए हुए था। बाद में वह पाँच हजार आठ सौ साठ किलोमीटर की दूरी तय करके तेंतीस घंटे उन्तीस मिनठ के भीतर पेरिस पहुँच गया। वह रातों रात एक हीरो बन बैठा और कई राष्ट्रों द्वारा उसे सम्मानित किया गया और कई राष्ट्रों ने कहा कि उसकी यात्रा धीरज और उसकी उड़ान कुशलता की कठिन परीक्षा थी। इन सबके अलावा लंबी यात्राओं के लिए हवाई जहाजों में विश्वास करने के प्रति लोगों में जो संदेह था, उसे इस उड़ान ने दूर कर दिया।



२१. प्रारंभिक हवाई जहाज़
१. राइट बंधुओं का हवाई जहाज़ १९०३
२. पौलहन का हवाई जहाज़ १९१०
३. लिन्डबर्ग का हवाई जहाज़ १९२७

तब से हवाई जहाज़ों ने कई शांतिकालीन मिशन पूरे किए हैं। एडमिरल वायर्ड ने १९२६ में उत्तरी ध्रुव और १९२९ में दक्षिणी ध्रुव प्रदेश पर से उड़ाने

भरीं। हवाई जहाज़ एवरेस्ट पर्वत, रेगिस्तानों और तूफानों के बीच से गुजर चुके हैं। यदाकदा दुर्घटनाओं के बावजूद उनकी लोकप्रियता बढ़ती ही जा रही है।

युद्ध में हवाई जहाज

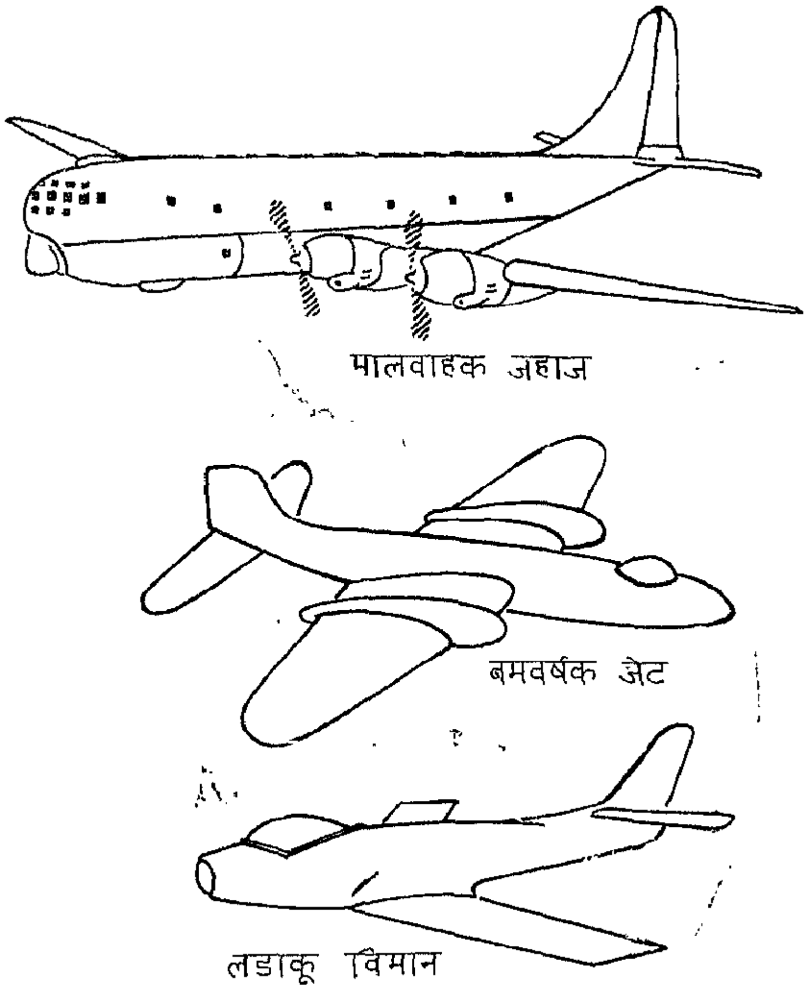
हवाई जहाज़ों के इस्तेमाल ने तो युद्ध की तस्वीर ही बदल दी है। द्वितीय विश्व युद्ध में इन्होंने बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। वे दुश्मन की फौज पर हमले के साथ ही लड़ाई को काफी दूर अंदर घुसकर दुश्मन के इलाके में ले जाते थे। युद्धरत सैनिकों के समान नागरिक भी इनके प्रहार से नहीं बच पाते थे।

युद्ध के दौरान कई प्रकार के विमान विकसित किए गए। युद्ध के सात वर्षों के भीतर विमानों के बारे में जो तरक्की हुई वह शांतिकाल के बीस वर्षों में ही संभव हो सकती थी। भारी बमबाज हवाई जहाज टनों बम लेकर दुश्मन के इलाके में दूर-दूर फौजी अड्डों और महत्वपूर्ण ठिकानों को अपना निशाना बनाते थे। दुश्मनों के विमानों से इनकी रक्षा के लिए लड़ाकू हवाई जहाज साथ रहते थे। अवरोधक विमानों या हवाई जहाज़ों का इस्तेमाल दुश्मन के हमलावर बमबाजों को भगाने अथवा मार गिराने के लिए किया जाता था। जहाँ-जहाँ जरूरत होती थी माल और यात्री वाहक जहाज हथियार, गोलाबारूद, खाद्य पदार्थ व अन्य सामान फौजियों को पहुँचाते थे। सबसे तेज यातायात होने के कारण हर जरूरी कार्य के लिए इन्हीं का उपयोग होता था।

उड़ने वाली मशीनों में हुए सबसे ताजे विकास ने इसकी उपयोगिता को बढ़ा दिया है। यह जेट प्रोपल्सन कहलाता है।

जेट प्रोपल्सन

जेट इंजन का सिद्धांत न्यूटन के गति संबंधी तीसरे नियम पर आधारित है। इस नियम के अनुसार प्रत्येक क्रिया की उसी के समान और विरोधी प्रतिक्रिया होती है। हम पहले ही देख चुके हैं कि अलेक्जेन्ड्रिया के हेरो ने किस प्रकार अपने भाप के इंजन में इसी नियम का पालन किया था।



२२. माल वाहक, बम वर्षक तथा लड़ाकू विमान

जेट इंजन के दाहक कक्ष में (कम्बस्टशन चेम्बर) में ईंधन जलता रहता है। इंधन के जलने से बनने वाली गैस जेट के पीछे खुले हुए स्थान से तेजी के साथ बाहर निकलती है। इस प्रतिक्रिया से जेट को आगे बढ़ने के लिए धक्के लगते हैं।

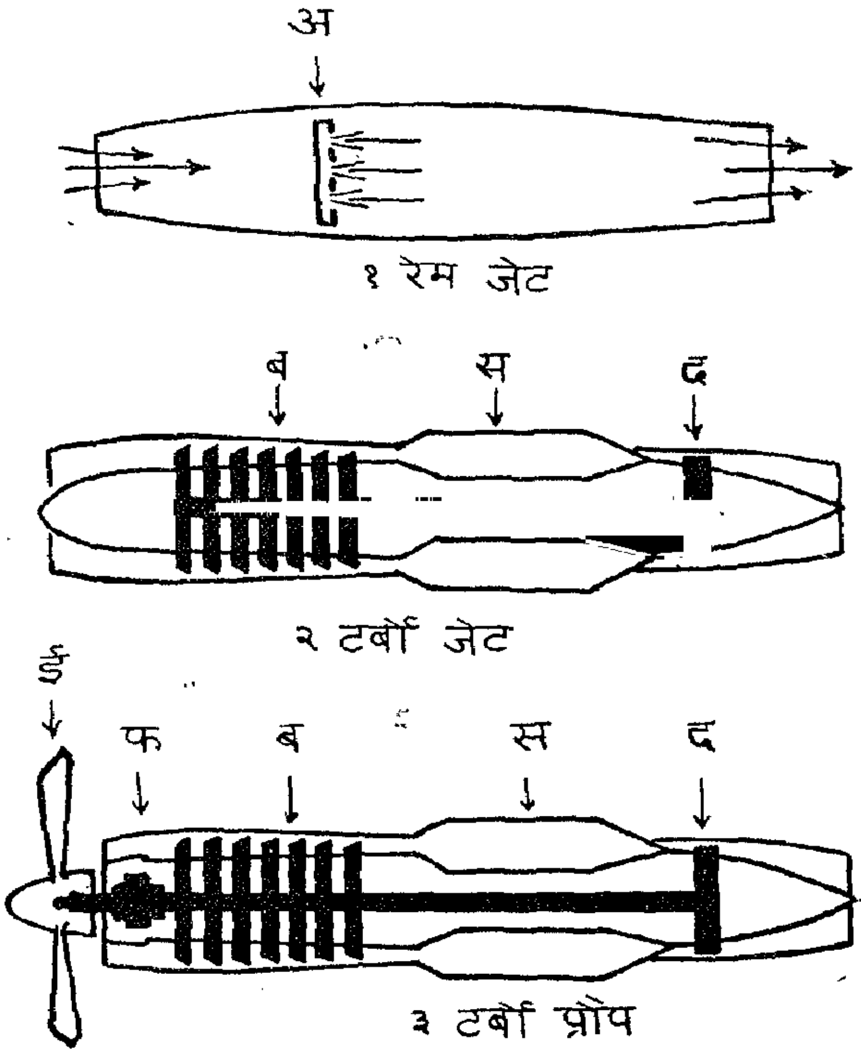
प्रत्येक किस्म के ईंधन को जलने के लिए आक्सीजन की जरूरत होती है। जेट इंजन अपने ईंधन के लिए वातावरण की हवा से आक्सीजन प्राप्त करता है। अतएव जेट बिना हवा के नहीं चल सकते हैं।

आमतौर पर जेट तीन प्रकार के होते हैं। इनके नाम हैं—रेमजेट, टर्बोजेट और टर्बोप्रोप।

इन तीनों में रेंमजेट सबसे सरल है। इसके सामने की ओर खुला स्थान होता है जिसमें से जेट के आगे बढ़ने के साथ ही हवा अंदर प्रविष्ट होती है। ईंधन पहुँच कर हवा में मिश्रित होता रहता है और प्रज्ज्वलित हो जाता है। इस मिश्रण के जलने से उत्पन्न गेस तेजी के साथ पिछले हिस्से के खुले स्थान से निकल कर जेट को आगे बढ़ने में मदद देती है।

टर्बोजेट में रेंमजेट के समान ही हवा सामने के खुले स्थान से प्रवेश करती है, लेकिन उसके भीतर एक कम्प्रेसर (दबाव वाला यन्त्र) लगा होता है जो हवा में ऊँचा दबाव उत्पन्न करता है। इससे हवा दाहक कक्ष में जाकर ईंधन से मिश्रित होती है और उसे प्रज्ज्वलित करती है। उत्पन्न गैसें बाहर निकलते समय एक टरबाइन या पंखे वाले चक्के के पंखों की कगारों अथवा किनारों से टकराती हैं। यह पंखे इस प्रकार बने होते हैं कि गैस का आघात उन्हें धुरे सहित चक्कर दिलाने लगता है। इससे कम्प्रेसर भी घूमने लगता है क्योंकि वह भी धुरे में लगा होता हैं। बाहर निकलने वाली गैसों की शक्ति के एक हिस्से का इस्तेमाल इस प्रकार भीतर आने वाली हवा में दबाव उत्पन्न करने के लिए होता है।

टर्बोप्रोप की टर्बो जेट के साथ केवल यही समानता है कि उसमें भी टरबाइन होता है। किन्तु इसके टरबाइन का धुरा दबाव उत्पन्न करने वाले यंत्र के साथ ही जेट के सामने लगी चर्खी या प्रोपेलर को भी सक्रिय करता है।



२३. जेट हवाई जहाजों के प्रकार

यह ध्यान देने योग्य बात है कि रेमजेट में कोई टरबाइन नहीं होती है। जेट इंजनों के सही ढंग से कार्य करने के लिए ऊँचे दबाव पर हवा का होना जरूरी है। रेमजेट में यह दबाव उस तेज गति से उत्पन्न होता है, जिस गति से जहाज़ चलता है। इसके अर्थ हैं कि तेज गति से चलने पर ही रेमजेट काम दे सकता है। इसलिए इसमें एक और इंजन की जरूरत पड़ती है, जो इसे चालू करके आवश्यक रफ्तार में लावे। लेकिन इस जेट से कई फायदे भी हैं। इसमें कोई घूमने वाला हिस्सा न होने के कारण यह ऊँचे तापमान पर भी काम कर सकता है। यह अन्य दो जेटों के मुकाबले कम ईंधन खर्च करता है।

जेट हवाई जहाजों के आविष्कार ने तेज गति से यात्रा संभव बना दी है। आवाज की गति बारह सौ किलोमीटर प्रति घंटा है। जबकि जेट इस गति सीमा को बहुत ज्यादा पार कर गए हैं और इन्होंने हवाई यात्रा के दायरे और अवसर को बढ़ा दिया है।

वायुमंडल के विजेता

जबसे हवाई यातायात में ये सुधार हुए हैं, हवाई जहाज़ विश्व के कोने-कोने में लोगों को ले जा रहे हैं। मुसाफिरों की तादाद, उड़ान का क्षेत्र और गति भी बढ़ती जा रही है। विशाल जहाज एयर लाइनर कहलाते हैं। यह घने और निम्न वायुमंडल को भेद कर उसके काफी ऊपर उड़ानें भरते हैं और सैंकड़ों यात्रियों को ले जाते हैं। कुछ हवाई जहाज़ नियमित उड़ानों में धरती से दस से तेरह हजार मीटर ऊँचे, नौ सौ साठ किलोमीटर प्रति घंटे की गति से एक सौ साठ तक मुसाफिर ले जा सकते हैं। रूसी टी० यू०-१४ तथा जम्बो जेट क्रमश: २२० तथा ४०० मुसाफिर तक ले जा सकते हैं।

एक काफी ऊँचे उड़ते हुए जेट हवाई जहाज़ का अत्यन्त दिलचस्प किस्सा है। इसने कुछ वर्ष पहले अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एक भारी सनसनी पैदा कर दी थी। यह जहाज़ अमरीकी था और इसका नाम यू-२ था। यह सोवियत संघ पर काफी ऊँची उड़ान भर कर वहाँ की फौजी जानकारियाँ एकत्र करता था। सामान्य तौर से यह

पंद्रह हजार मीटर की ऊँचाई पर उड़ता था और इक्कीस हजार मीटर तक ऊपर और जा सकता था। इस ऊँचाई पर यह छः घंटे तक उड़ान भर सकता था। इक्कीस हजार मीटर की ऊँचाई पर उड़ान भरने वाला यह जहाज रूसी लड़ाकू जहाज़ों की पहुँच के बाहर था जो वर्षों तक अनुमान ही लगाते रहे। अप्रैल १९६० में एक उड़ान के दौरान इंजन की कुछ गड़बड़ी के कारण इसे नीचे आना पड़ा और ऐसा होते ही उसे रूसी जेट हवाई जहाजों ने दबोच लिया।

यू-२ ग्लाइडर की किस्म का जेट था। उसके पंखों की लंबाई लगभग चौबीस मीटर और ढाँचा पंद्रह मीटर लंबा था। यह एक हल्की धातु का बना हुआ था। इसमें विशेष ईंधन का प्रयोग होता था, क्योंकि इक्कीस हजार मीटर की ऊँचाई पर वायुमंडल संबंधी निम्न दबाव होने के कारण आमतौर से प्रयुक्त मिट्टी का तेल और पैट्रोल के मिश्रण वाले ईंधन के उबल जाने का खतरा था।

अंतरिक्ष यात्रा

अंतरिक्ष यात्रा से हम क्या समझते हैं? क्या इक्कीस हजार मीटर की ऊँचाई तक पहुँचने वाला यू-२ हवाई जहाज वायुमंडल में अथवा अंतरिक्ष में उड़ान भर रहा था?

यातायात की दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि अंतरिक्ष की शुरूआत वहाँ होती है जहाँ से हवा पतली पड़ने लगती है और हवाई जहाज को आगे बढ़ाने वाले ईंधन का शीघ्रता से जलना संभव न हो सके। इस सीमा से पार यात्रा करने वाले वाहन को अपने पास आक्सीजन का पर्याप्त भंडार रखना पड़ता है।

जितना ही हम ऊपर जाएँगे, वायुमंडल उतना ही पतला होता जाएगा। वायु का दबाव समुद्र तल से प्रतिवर्ग सैंटीमीटर करीब एक किलोग्राम होता है। पाँच किलोमीटर की ऊँचाई पर यह उक्त दर का आधा, सोलह किलोमीटर पर दस प्रतिशत और बत्तीस किलोमीटर पर एक प्रतिशत रह जाता है।

राकेट, जिनके बारे में आगे बताया जाएगा, अपनी खुद की आक्सीजन ले कर चलते हैं। वे अपने ईंधन की दाह क्रिया के लिए वायुमंडल में व्याप्त आक्सीजन पर

निर्भर नहीं रहते हैं। हवा उनकी उड़ान में बाधक बनती है, अतएव वे उस जगह ज्यादा उपयोगी सिद्ध होते हैं जहाँ कि हवा नहीं होती है। यह पाया गया है कि करीब एक सौ नब्बे से दो सौ पचपन किलोमीटर की ऊँचाई पर एक तरह शून्य सा है। इस सीमा से बाहर राकेट को उड़ान भरता देखकर राकेट इंजीनियर को प्रसन्नता ही होती है।

अंतरिक्ष उड़ानों में इसीलिए राकेटों का इस्तेमाल किया जाता है। वे जेट इंजनों के समान ही कार्य करते हैं और फर्क केवल इतना ही है कि उनके पास अपने साथ आक्सीजन और ईंधन का स्वयं अपना भंडार होता है। इसलिए उन्हें किसी टरबाइन या प्रोपेलर की जरूरत नहीं होती है। राकेट के दाहक कक्ष में ईंधन और आक्सीजन का मिश्रण प्रज्ज्वलित होता रहता है। इस प्रकार उत्पन्न काफी मात्रा में गैस तेजी के साथ राकेट के पिछले हिस्से से निकलती रहती है। इन्हीं की प्रतिक्रिया राकेट को आगे बढ़ाती है।

राकेट ठोस अथवा तरल ईंधन का इस्तेमाल करते हैं। तरल ईंधन वाले राकेट ईंधन और आक्सीजन अलग-अलग टंकियों में लेकर चलते हैं। जलने के समय दाहक कक्ष में यह दोनों मिश्रित होते रहते हैं। ठोस ईंधन वाले राकेटों में ईंधन आक्सीजन मिश्रित होता है और उन्हें एक ही टंकी में रखा जाता है।

राकेट एक खंड वाले या बहुखंडीय हो सकते हैं। बहुखंडीय राकेट में दो या इससे ज्यादा राकेट जुड़े होते हैं। सबसे नीचे के राकेट को प्रक्षेपण या बूस्टर राकेट कहा जाता है। यह पहले प्रक्षेपित किया जाता है और जब इसका सारा ईंधन जल जाता है तो अगले खंड का ईंधन प्रज्ज्वलित होता है। खाली पहला खंड अलग होकर गिर जाता है। इसका एक लाभ है, क्योंकि खाली राकेट अलग होकर बोझ को हल्का कर देता है। इसके फलस्वरूप बहुखंडीय राकेट उसी मात्रा के ईंधन से ज्यादा गति पैदा कर सकते हैं।

इस्केप वेलोसिटी अथवा निकास गति

यदि हम क्रिकेट की गेंद को ऊपर फेंके, तो वह एक ऊँचाई तक पहुँचने के बाद

नीचे गिर जाएगी। उसके नीचे गिरने के पीछे होता यह है कि उसे हमेशा धरती की गुरुत्वाकर्षण शक्ति अपनी ओर खींचती रहती है। वह ताकत जिसके द्वारा जमीन सभी वस्तुओं को अपनी ओर आकर्षित करती है गुरुत्वाकर्षण कहलाती है।

अगर हम ज्यादा से ज्यादा ताकत के साथ गेंद को फेंकें तो वह काफी ऊँचाई तक जाने के बाद नीचे आना शुरू करेगी। यह अनुमान लगाया गया है कि यदि कोई वस्तु ग्यारह दशमलव तीन किलोमीटर प्रति सेकेंड की गति से ऊपर फेंकी जाए तो वह कभी नीचे नहीं आएगी, क्योंकि तबतक वह पूरी धरती के आकर्षण से मुक्त हो चुकी होगी। यह गति धरती से निकास की गति के नाम से जानी जाती है।

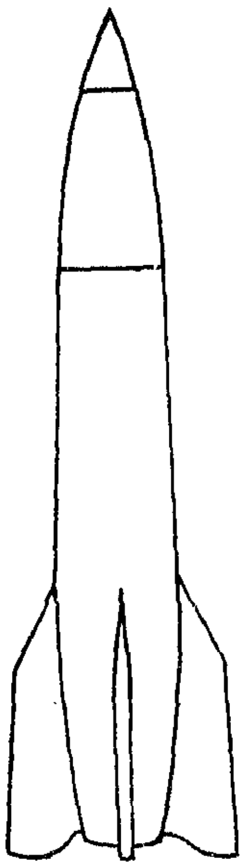
सात दशमलव चार किलोमीटर प्रति सेकेंड गति की वह निम्न सीमा है जिससे फेंकी गई चीज न तो धरती पर वापस ही आ सकती है और न ही अंतरिक्ष की ओर बढ़ सकती है। यदि कोई राकेट गति पकड़ने पर क्षितिज के समानांतर दिशा ले लेता है, तो वह धरती के चारों तरफ घूमता ही रहेगा। इसी प्रकार के राकेट को धरती के चारों ओर चक्कर लगाने के लिए छोड़ा गया कृत्रिम अंतरिक्ष उपग्रह कहते हैं। सैटेलाइट या उपग्रह एक ग्रह का चक्कर लगाने वाली वस्तु को कहते हैं और आरबिट ग्रह के चारों ओर रास्ते को कहा जाता है।

कृत्रिम उपग्रह

राकेट के बारे में बहुत पहले से जानकारी है और इनका इस्तेमाल युद्ध के हथियारों के रूप में होता था लेकिन द्वितीय महायुद्ध में इन्हें भयानक संहारक शक्ति के रूप में विकसित किया गया था। इंगलैंड पर प्रहार करने के लिए जर्मनी ने अपने वी-१ और वी-२ राकेटों का प्रयोग किया था। यह राकेट अपने साथ भारी विस्फोटक सामग्री लेकर चलते थे।

जर्मनी की पराजय के बाद मित्र राष्ट्रों ने प्रयोग में न आए काफी राकेटों को अपने कब्जे में ले लिया था। यह राकेट वी-२ किस्म के थे। इनको बनाने के लिए मित्र राष्ट्रों ने कुछ जर्मन वैज्ञानिक और इंजीनियरों की मदद प्राप्त कर ली थी।

बाद में अमरीका और रूस ने राकेट अनुसंधान का व्यापक अभियान शुरू कर दिया। पहले राकेटों को निश्चित लक्ष्य तक बम ले जाने के उद्देश्य से तैयार किया जाता था। अब एटम और हाईड्रोजन बम भी बन गए हैं। राकेट को प्रक्षेप्यास्त्र भी कहते हैं जो परमाणविक बम ले जा सकता है और एक नया और अत्यंत घातक यंत्र सिद्ध हो सकता है।



२४. जर्मनी का वी-२ राकेट

समय गुजरने के साथ ही मिज़ाइल अथवा प्रक्षेप्यास्त्रों को विकसित किया जाता रहा है। जिससे कि वे ज्यादा से ज्यादा दूरी तक जा सकें। जो पाँच हज़ार किलोमीटर तक जा सकते हैं उन्हें इंटरमीजिएट रेंज बैलिस्टिक मिज़ाइल अथवा मध्यम दूरी के प्रक्षेप्यास्त्र कहते हैं। जो प्रक्षेप्यास्त्र इस सीमा से बाहर और आठ हज़ार किलोमीटर से भी ज्यादा दूरी तक जा सकते हैं उन्हें अंतर्महाद्वीपीय प्रक्षेप्यास्त्र अथवा इंटरकौंटीनेंटल बैलिस्टिक मिज़ाइल कहा जाता है। अब तो इस प्रकार के प्रक्षेप्यास्त्र साढ़े चौदह हज़ार किलोमीटर तक पहुँच सकते हैं।

इसी प्रकार के राकेटों से मिल कर बहुखंडीय राकेट बनता है जिसका उपयोग अंतरिक्ष-खोज में होता है। सबसे पहला कृत्रिम उपग्रह स्पूतनिक-१ के नाम से सोवियत रूस ने ४ अक्तूबर, १९५७ में भेजा था। इसके घूमने का दायरा धरती से दो सौ तीस किलोमीटर निकटतम और नौ सौ पचास किलोमीटर अधिकतम था। इसमें ८३.५ किलोग्राम वजन के वैज्ञानिक यंत्र रखे हुए थे।

अमरीका ने अपना पहला भू-उपग्रह ३१ जनवरी, १९५८ को भेजा जिसका नाम एकसप्लोरर-१ था। इसकी निकटतम दूरी तीन सौ साठ किलोमीटर तथा अधिकतम दूरी ढाई हजार किलोमीटर के लगभग थी। उसमें करीब ८.२ किलोग्राम भार के यंत्र थे।

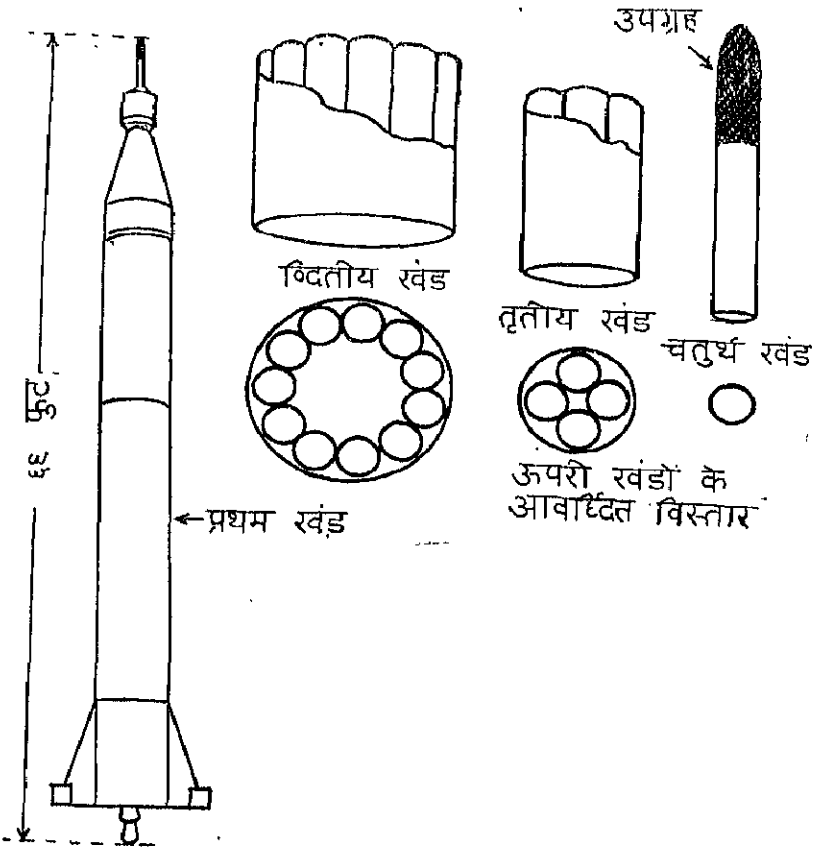
इन उपग्रहों के भेजने का उद्देश्य धरती की सतह के ऊपर विभिन्न ऊँचाईयों की स्थिति की खोज करना था। इन स्थितियों के अध्ययन से मानव द्वारा अंतरिक्ष यात्रा के समय उठाए जाने वाले खतरों और उनसे बचाव के उपायों का संकेत मिलता है।

अगला कदम अंतरिक्ष में पशु को भेजना था। ३ नंवबर, १९५७ को भेजे गए दूसरे रूसी उपग्रह स्पूतनिक-२ में लाइका नाम की एक कुतिया भी थी। उपग्रह में चौवन परिक्रमाओं तक वह जीवित रही और उड़ान भरने के करीब सौ घंटे बाद बिना किसी कष्ट के मर गई।

अंतरिक्ष की खोज के लिए भेजे जाने वाले राकेटों की बनावट की जानकारी देने के लिए हम अमरीकी राकेट एक्सप्लोरर-१ को ले सकते हैं।

इस राकेट की कुल लंबाई इक्कीस मीटर (६९ फुट) थी। पहले खंड का नाम रेडस्टोन राकेट था। दूसरे खंड में ग्यारह ठोस ईंधन युक्त छोटे राकेट थे, जिन्हें एक दायरे में रखा गया था। तीसरे खंड में इसी प्रकार के चार या पाँच छोटे राकेट थे। चौथे और अंतिम खंड में एक छोटा राकेट था जिससे कि यंत्रों से लैस उपग्रह जुड़ा हुआ था।

रेडस्टोन तरल ईंधन से चलता है और इसके लिए उसने हाइड्रोजाइन को ईंधन के रूप में इस्तेमाल किया था। चौथे खंड में जिससे कि उपग्रह जुड़ा था, कोई ईंधन नहीं था, वह मात्र एक खाली खोल ही था। उपग्रह के साथ यह भी पृथ्वी के चक्कर लगाने लगा था। तेरह किलोमीटर वजन वाला यह राकेट दो सौ सेंटीमीटर लंबा और करीब पन्द्रह सेंटीमीटर गोलाई में था। यंत्रों का पैकेट ही लंबाई में एक मीटर का तीन चौथाई भाग था।



२५. एक्सप्लोरर-१

प्रथम खंड—तरल ईंधन युक्त राकेट
द्वितीय खंड—ग्यारह ठोस ईंधन युक्त राकेट
तृतीय खंड—चार ठोस ईंधन युक्त राकेट
चतुर्थ खंड—उपग्रह से जुड़ा हुआ एक ठोस ईंधन युक्त राकेट

अंतरिक्ष यात्रा की समस्याएँ

हालाँकि कृत्रिम उपग्रह परिक्रमा के लिए अंतरिक्ष में भेजे तो जरूर गए किंतु मानव को भेजने में काफी समस्याएँ थीं ।

हम जितना ही ऊपर जाते हैं उतना ही वायुमंडल का दबाव घटता जाता है । आठ किलोमीटर की ऊँचाई पर मनुष्य को साँस लेने के लिए आक्सीजन की जरूरत पड़ती है क्योंकि हवा काफी पतली हो जाती है । उन्नीस किलोमीटर की ऊँचाई पर पर शरीर के भीतर मौजूद तरल पदार्थ कम दबाव के कारण उबलने लगते हैं, इस लिए केवल आक्सीजन ही कोई काम नहीं कर सकती है । इस ऊँचाई अथवा इससे भी ऊपर जाने वाले मनुष्य की तुरंत मौत हो सकती है । अतएव हवा का आवश्यक दबाव कायम रखने के लिए विशेष प्रकार की अंतरिक्ष पोशाक और कक्ष की व्यवस्था करनी पड़ती है ।

इनके अलावा सूर्य के प्रकाश (रेडियेशन), कास्मिक किरणों और उल्काओं जैसे खतरों की समस्याओं का भी अध्ययन बहुत जरूरी है । इसके अलावा एक और महत्वपूर्ण तथ्य है, जिस पर ध्यान देना जरूरी रहता है और वह है वायुमंडल से बाहर आने पर राकेट के साथ हवा की रगड़ से पैदा होने वाली गर्मी या ताप ।

अंत में गुरुत्वाकर्षण शक्ति के कुछ अनोखे प्रभाव भी पड़ते हैं । जैसे-जैसे राकेट गति पकड़ता है वैसे-वैसे कक्ष में बैठे अंतरिक्ष यात्री को ऐसा लगता है कि मानों उसका वजन बढ़ता जा रहा है । इसके विपरीत जब वह गुरुत्वाकर्षण के दायरे के भीतर स्वातंत्रतापूर्वक घूमता है तो उसे भारहीनता महसूस होती है । लिफ्ट में ऊपर-नीचे जाते समय हम भी थोड़ा-बहुत यह अनुभव कर सकते हैं । मानव किस सीमा तक इन प्रभावों को बर्दाश्त कर सकता है उनका अध्ययन किया जाना और उसी के अनुसार यात्रा की पूर्ण योजना बनाना अति आवश्यक है ।

यह तथ्य कि लाइका करीब सौ घंटे तक जीवित रही थी, यह दिखलाता है कि ज्यादातर यह समस्याएँ हल कर ली गई थीं । अंतरिक्ष में जाने को उत्सुक मानव

के लिए यह एक हरी झंडी थी।

अंतरिक्ष में मानव

पहला मानवयुक्त उपग्रह १२ अप्रैल, १९६१ को अंतरिक्ष रवाना हुआ था। यह रूसी उपग्रह वोस्तोक-४ था, जो धरती की परिक्रमा के लिए यूरी गागारिन को ले कर रवाना हुआ था। वह पृथ्वी के कक्ष का चक्कर पूरा कर वापस आ गए थे। उनकी परिक्रमा की परिधि सबसे निकटतम १७३ किलोमीटर और दूरतम ३०० किलोमीटर थी।

अमरीका की ओर से पहले अंतरिक्ष यात्री एलेन बी शेपर्ड थे, जो ५ मई, १९६१ को करीब १८७ किलोमीटर की ऊँचाई तक गए जरूर थे, लेकिन धरती की परिक्रमा करने में असमर्थ रहे। धरती की परिक्रमा अमरीका की ओर से पहली बार जौन एच ग्लेन ने की। यह २० फरवरी, १९६२ को रवाना हुए थे। उनके उपग्रह का नाम फ्रेंडशिप-७ था और प्रक्षेपण राकेट का नाम एटलस था।

इन प्रारंभिक प्रयासों के बाद से अनेक मानवयुक्त उपग्रह या यान अंतरिक्ष में भेजे गए हैं। इनमें यात्रा करने वाले अंतरिक्ष यात्रियों ने कई करतब दिखलाए हैं। अपनी अंतरिक्ष पोशाकों से लैस यह यात्री यान से बाहर निकल कर अंतरिक्ष में चहल कदमी भी कर चुके हैं। इन्होंने पहले से छोड़े गए अन्य राकेटों को आपस में जोड़ने का भी काम किया है।

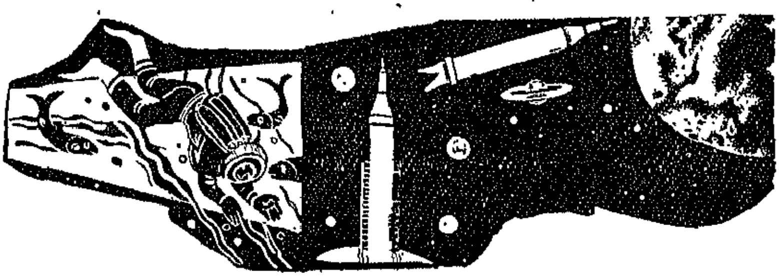
आँकड़े व जानकारी एकत्र करने के लिए भेजे जाने वाले यानों को खोजी यान कहा जाता है। यह बाद में मानव की अगली यात्रा का रास्ता बनाते हैं। यह देखते हुए कि राकेटों के अंतरिक्ष की ओर जाने के अल्प समय के भीतर जो प्रगति इस दिशा में हुई है, वह वास्तव में प्रभावकारी है।

१७ सितंबर, १९५९ को भेजा गया रूसी यान ल्यूना-२ चंद्रमा की धरती से टकरा कर नष्ट हो गया था। ल्यूना-३ चंद्रमा के सात हजार किलोमीटर तक नजदीक पहुँच गया था और उसने चंद्रमा के उस भाग के चित्र धरती पर भेजे, जिन्हें हम

कभी देख नहीं पाते हैं। अंतरिक्ष की खोज और आगे बढ़ती गई। १९६२ में अमरीकी यान मैरिनर-२ शुक्र ग्रह की ओर रवाना हुआ। मैरिनर-४ ने १९६५ में अपनी साढ़े सात महीने की यात्रा पूरी करके मंगल ग्रह के निकट से उसके चित्र लिए थे।

एक अन्य उपलब्धि चंद्रमा की धरती पर यान का बिना किसी क्षति के उतरना था। यह उपलब्धि मानव को चंद्रमा पर उतारने की दिशा में एक महान अग्रिम कदम सिद्ध हुई और संभावित उतरने के स्थानों के चित्र प्राप्त किए गए।

तबसे हुई प्रगति आश्चर्यजनक है। अमरीकी अंतरिक्ष यात्री दो बार चंद्रमा की धरती पर उतर कर सुरक्षित धरती पर वापस आ चुके हैं। यह एक ऐसी उपलब्धि है जो केवल सपने अथवा परियों की कहानियों में ही संभव हो सकती है। अगले अध्याय में हम उस यान का वर्णन करेंगे जिसमें इन यात्रियों ने चंद्रमा तक की यात्रा पूरी की थी।



अध्याय ५

यातायात में नए मोड़

मानव की यात्राओं का तीन दिशाओं में बाँटा जा सकता है। पहली दिशा भूमि और समुद्र की सतह, दूसरी वायुमंडल और अंतरिक्ष और तीसरी भूमि एवं समुद्र की गहराइयों की खोज को कहा जा सकता है। पहली दो दिशाओं में हाल की अथवा भविष्य संबंधी प्रगति हुई है, इस पर विचार करने से पूर्व तीसरी दिशा में क्या प्रगति हुई है, यह जान लेना एक दिलचस्प बात होगी।

धरती की गहराइयों की खोज की दिशा में मानव की प्रगति नहीं के बराबर कही जा सकती है। पृथ्वी की त्रिज्या (रेडियस) करीब ६४०० कि०मी० है। मनुष्य द्वारा अब तक निर्मित सबसे गहरी खान ३.२ कि०मी० से भी कम है। इसे समुद्र में बूँद के बराबर ही कहा जाएगा। धरती की गहराइयों में खोज का कोई भी बड़ा कार्य बहुत ही खर्चीला बैठता है। वैज्ञानिक उत्सुकता के अलावा कोई और विशेष लाभ इस समय इतना भारी खर्च उठाने में नहीं है।

फिलहाल, धरती की ऊपरी सतह में छिद्र करके उसके नीचे की पर्त से उसके संबंध का अध्ययन करने के लिए "मोहोल" नामक एक योजना सोची गई थी । धरती की ऊपरी सतह की मोटाई पाँच से बत्तीस कि०मी० के बीच है। जमीन की अपेक्षा समुद्रतल में यह काफी पतली होती है । मोहोल के अंतर्गत समुद्रतल से पाँच कि०मी० अंदर एक छिद्र (बोरिंग) करने का विचार किया गया था । यह सोचा गया था कि इस कार्य से अन्य बातों के अलावा भूकंप और ज्वालामुखियों के कारण का पता चल सकेगा । लेकिन खर्च की विशालता को देखते हुए यह योजना छोड़ दी गई ।

इसके विपरीत समुद्र की गहराइयों की खोज संभवत: लाभदायक हो सकती है। समुद्र जीवन एवं खनिजों से भरपूर है । पृथ्वी के लाखों लोगों की खाद्य समस्या दिन प्रतिदिन अत्यंत विषम होती जा रही है । समुद्र से हमें व्यापक पैमाने पर खाद्य सामग्री प्राप्त हो सकती है । अतएव यह सोचना उचित ही होगा कि समय बीतने के साथ ही मानव का झुकाव समुद्र की ओर ज्यादा से ज्यादा होता जाएगा ।

हाल के अनुसंधानों से पता चला है कि समुद्र की तलहटी में कच्ची धातुओं के टुकड़े बिखरे हुए पड़े हैं । इन लाखों टन टुकड़ों को सिर्फ बाहर निकालने की ही जरूरत है । समुद्र की तलहटी में हमेशा से ही इन धातुओं का जमाव होता रहा है । यह अनुमान लगाया गया है कि इन धातुओं की प्राप्ति जमीन पर खानें खोद कर करने की अपेक्षा समुद्र की पेंदी से प्राप्त करना कम खर्चीला पड़ेगा । इससे भविष्य में समुद्र की गहराइयों के प्रति लोगों की रुचि भी बढ़ जाएगी ।

सागर की गहराइयाँ

प्राचीनकाल में समुद्र में गहरे जाने की कोई कोशिशें नहीं की कई थीं । छिछले स्थानों को छोड़ कर सागर की गहराइयों को नापने की चिंता किसी ने भी नहीं की थी । यह एक समझ में आने वाली बात थी क्योंकि समुद्र में गहरे पैंठना कोई मामूली काम नहीं है ।

सागर में गहरे पैठने में दो बड़ी कठिनाइयाँ सामने आती हैं। पहला कठिनाई श्वास लेने की और दूसरी पानी के बढ़ते हुए दबाव की। हम समुद्र के भीतर जितनी गहराई तक जाएँगे उतनी ही हमें साँस लेने में कठिनाई पड़ती जाएगी और गहराई के साथ पानी का दबाव भी बढ़ता जाएगा।

मनुष्य पानी में एक या दो मिनट से ज्यादा देर तक नहीं रह सकता है। अतएव गोताखोरों के लिए विशेष प्रकार के टोप और श्वास पहुँचाने की नालियों की व्यवस्था की गई, लेकिन पन्द्रह मीटर की गहराई के बाद यह सब व्यर्थ सिद्ध हुई। इस गहराई के आगे पानी का दबाव इतना भारी हो जाता है कि गोताखोरों को उससे सुरक्षित रखने के तरीके खोजने की जरूरत पड़ गई थी। कुछ सौ मीटर और आगे तक जाने में मनुष्य को समर्थ बनाने के लिए गोताखोरों की पोशाकें बनाई गईं। लेकिन वे इतनी भारी और सुरक्षा व्यवस्थाओं से पूर्ण होती थीं कि गोताखोर को अपने अंग हिला सकना मुश्किल पड़ता था।

हम पनडुब्बियों का वर्णन पहले ही कर चुके हैं। इसका उद्देश्य समुद्र की गहराई में गोता लगाना नहीं होता है, बल्कि दुश्मन के जलयानों से ओझल रखने के लिए समुद्र के काफी भीतर चलना होता है। पनडुब्बियाँ ऐसी बनाई जाती हैं कि वे नब्बे मीटर तक समुद्र के भीतर जा सकें। लेकिन यह देखते हुए कि समुद्र की गहराई कई मीटर है, यह गहराई कोई अर्थ नहीं रखती है।

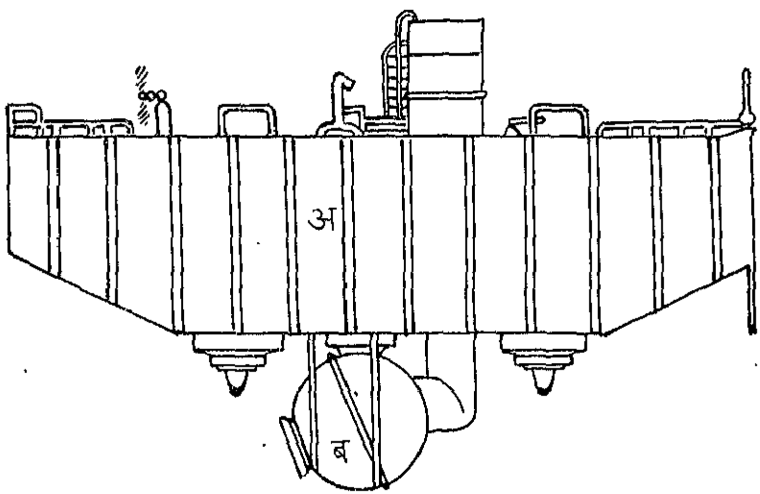
सागर की गहराई की खोज में पहली बार वास्तविक प्रगति बेथीस्फेयर द्वारा हुई। यह एक गोलाकार खोल की शक्ल का था और इसकी गोलाई १.४ मीटर की थी। पानी के भारी दबाव से बचने के लिए इस्पात की ३.२५ से०मी० मोटी चादर का इसका आवरण था। इसमें दो छोटी खिड़कियाँ थीं, जिसमें ७.५ से०मी० मोटाई के शीशे लगे हुए थे। एक खिड़की से इसमें बैठा व्यक्ति समुद्र का जायज़ा लेता था और दूसरी खिड़की से तीव्र प्रकाश चारों ओर फेंका जाता था।

बेथीस्फेयर को एक मोटे तार द्वारा समुद्र में उतारा जाता था। इसके भीतर रखी आक्सीजन की टंकी द्वारा श्वास के लिए हवा की व्यवस्था की गई थी और गंदी हवा

को नष्ट करने के लिए कुछ रसायन भी रखे हुए थे।

इस मशीन के आविष्कारक डा० डैनियल वीब अपने सहयोगी ओरिस बर्टन के साथ १९३४ में समुद्र के भीतर नौ सौ मीटर तक गहराई में उतरे। बाद में १९४९ के दौरान बर्टन बेथीस्फेयर की सहायता से अकेले ही साढ़े तेरह सौ मीटर तक सागर के भीतर गए थे।

सबसे अधिक गहराई तक जाने का सौभाग्य एक अन्य यंत्र बेथीस्केफे द्वारा प्राप्त किया गया है। बेल्जियम के डा० आगस्ट पिकार्ड इस मशीन या यंत्र के अविष्कारक



२७. बेथीस्केफे
अ—धातु का आवरण
ब—गोलाकार मशीन

थे। यह मशीन गोलाकार थी और धातु के एक आवरण से जुड़ी हुई थी। इसके खोल की बाहरी दीवार तेरह से० मी० मोटे इस्पात की बनाई गई थी। इसमें भारी वजन भी

रखा गया था। यंत्र को सागर की सतह पर लाने के लिए वजन बाहर फेंक दिया जाता था।

डा० पिकार्ड के पुत्र जेक्विस पिकार्ड १९६० में समुद्र के अंदर ग्यारह कि०मी० तक गए थे, जो अब तक की सबसे ज्यादा दूरी या गहराई समझी जाती है।

हालाँकि, सागर में खाद्य व संपदा की बहुतायत है किंतु इस बात में संदेह है कि सागर तल की यदा कदा अथवा नियमित यात्रा की कभी जरूरत पड़ेगी। गहराई में चलने वाले जहाज़ आसानी के साथ यंत्रों द्वारा समुद्रतल से किसी भी वस्तु को उठा कर इच्छित स्थान पहुँचाने में स्वयं समर्थ हैं, अतएव अलग से कोशिशें करने की कोई जरूरत नजर नहीं आती है।

पारमाणविक शक्ति

न्यूक्लीयर पावर अथवा पारमाणविक शक्ति आधुनिक युग की सबसे बड़ी उपलब्धि है जिसके दूरगामी परिणाम हो सकते हैं। इसने अविश्वसनीय शक्ति के हथियार प्रदान किए हैं। लेकिन इसका शक्ति के नियंत्रित स्रोत के रूप में उपयोग अभी प्रारंभिक अवस्था में ही है।

यह शक्ति दो तरह से प्राप्त की जाती है। पहला तरीका यूरेनियम और प्लूटोनियम जैसे भारी अणुओं के परमाणुओं में विस्फोट पैदा करने का अथवा उन्हें तोड़ने का है और दूसरा तरीका हल्के परमाणुओं को एकजुट करके भारी अणु तैयार करने का है। हाइड्रोजन बम में हाइड्रोजन अणुओं की एकरूपता (फ्यूजन) से हीलियम के अणु पैदा होते हैं।

दोनों ही तरह की प्रतिक्रियाओं, विभाजन अथवा विस्फोट (फिशन) और एक-जुटता अथवा द्रवत्व (फ्यूजन) द्वारा बहुत बड़ी शक्ति पैदा होती है। द्रवत्व अथवा एकजुटता की प्रक्रिया कई लाख डिग्री के अत्यंत उच्चतम ताप द्वारा उत्पन्न होती है। अतएव इसे परमाणुतापीय (थरमोन्यूक्लीयर) प्रतिक्रिया कहते हैं।

विभाजन अथवा विस्फोट की प्रक्रिया उत्पन्न करने की विधाओं को रियेक्टर (अणु भट्टी) कहते हैं। यह अणुओं की शक्ति का बिजली के रूप में प्रयोग करा सकते

हैं। द्रवत्व अथवा एकजुटता की समस्या पर अभी काबू नहीं पाया जा सका है।

शक्ति उत्पन्न करने के अलावा पारमाणविक प्रतिक्रियाएँ कुछ घातक किरणें व अंश पैदा करते हैं। इन्हें रेडियो सक्रियता कहते हैं। इसीलिए रियेक्टरों अथवा अणुभट्टियों को अत्यंत मोटे कंक्रीट या इस्पात के आवरण से ढँक कर रखना बहुत जरूरी है।

सामान्य यातायात साधनों द्वारा पारमाणविक रियेक्टरों को बाहर ले जाना आसान और खतरे से खाली नहीं है। रियेक्टर व उसके आवरण का वजन कई टन होता है। अतएव रियेक्टर केवल बड़े और भारी वजन वाले वाहनों द्वारा ही ले जाए जा सकते हैं। इसके अलावा दुर्घटनाओं का भी भारी खतरा है। दुर्घटना से रियेक्टर के रेडियो सक्रिय तत्वों के वातावरण में चारों तरफ फैल जाने और एक व्यापक क्षेत्र को प्रभावित करने का खतरा है।

अतएव, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि पारमाणविक शक्ति से चालित यातायात का साधन विशाल जलयानों और पनडुब्बियों को बनाया गया है।

अणुशक्ति चालित अमरीकी पनडुब्बी नोटिलस ने अपनी परीक्षण समुद्री यात्रा १९५५ में प्रारंभ की। केवल चार किलोग्राम आणविक ईंधन खर्च करके इसने छियानवे हजार किलोमीटर की यात्रा पूरी की थी। यह पनडुब्बी उत्तरी ध्रुव के नीचे से प्रशांत महासागर से लेकर अतलांतक महासागर तक यात्रा पूरी करके एक इतिहास कायम कर चुकी है। उत्तरी ध्रुव को चारों ओर से घेरने वाली बर्फीली चोटियों के भीतर से इसने यात्रा की थी। इस मार्ग से यूरोप और सुदूर पूर्व की दूरी प्रायः आधी ही रह जाती है। माल ढोकर इस मार्ग पर चलने वाली पनडुब्बियाँ काफी लाभदायक व्यापार का साधन बन सकती हैं।

अन्य अणुचालित जलयान सोवियत रूस का बर्फ विध्वंसक लेनिन है। इसे १९५७ में उतारा गया था। बाद में अणुचालित अमरीकी माल एवं यात्रीवाहक जहाज़ सावन्नाह प्रकाश में आया। यह सोलह हजार टन वजन वाला एक छोटा जहाज़ है। लेकिन यह बहुत ही मजबूत और शक्तिशाली है, क्योंकि इसको बर्फीले

ध्रुवीय प्रदेशों से गुजरना पड़ता है। बिना दुबारा ईंधन लिए हुए इसका रियेक्टर अथवा भट्टी पूरे मौसम भर तेंतीस हजार किलोवाट शक्ति पैदा करती है।

ऊपर लिखे कारणों और रियेक्टरों की भारी लागत के कारण परमाणुशक्ति का सामान्य यातायात के लिए उपयोग असंभव है। इसे तो केवल भारी यातायात के लिए ही प्रयोग में लाया जा सकता है। मोटरें, ट्रकें और सामान्य हवाई जहाज शायद ही इसके आवरण या खोल का भार झेल सकें। इसके अलावा ऐसे यातायात साधनों से दुर्घटनाओं का भारी खतरा है।

रेलगाड़ियाँ अणुशक्ति का उपयोग अवश्य कर सकती हैं, लेकिन इनके लिए यह जरूरी नहीं कि हर जगह वे रियेक्टरों को लादे फिरा करें। यह सबसे सस्ता होगा यदि उपयोगी स्थानों पर अणुचालित बिजलीघरों की स्थापना की जाय और उनसे उत्पन्न बिजली द्वारा रेलों को चलाया जाय। भाप से बिजली के उपयोग की ओर सुविधाअनुसार रेलें स्वयं ही बढ़ती जा रही हैं और भविष्य में यह माला और ज्यादा होने की आशा है।

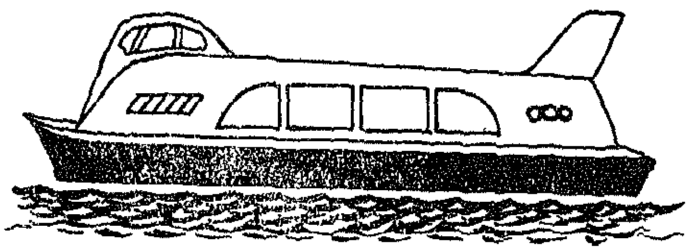
संभवत: अणुशक्ति का सबसे अच्छा उपयोग अंतरिक्ष याला में हो सकता है। अंतरिक्ष यात्रा के लिए विशाल यान और विशाल अंतरिक्ष स्टेशनों की जरूरत पड़ती है। इनके लिए बहुत बड़ी शक्ति की आवश्यकता है। आणविक या पारमाणविक शक्ति इनके लिए काफी लाभकर और सस्ती साबित होगी, क्योंकि इसके कारण दुबारा ईंधन लेने की जरूरत नहीं रहेगी। इस क्षेत्र में व्यापक अनुसंधान हो रहे हैं।

अन्य आधुनिक मोड़

यातायात के भविष्य पर संभावित प्रभाव डालने वाला हाल का आविष्कार हवाई कार अथवा होवरक्राफ्ट है। इसे "ग्राउंड इफेक्ट" मशीन भी कहा जाता है। इसका चौड़ा आधार एक औंधी तश्तरी के समान होता है। इसके आधार में बने झरोखों से नीचे की ओर जाने वाले हवा के शक्तिशाली झोंके इसे जमीन की सतह से ऊपर उठा देते हैं। इससे हवा की एक पर्त अथवा गद्दा-सा बिछ जाता है, जो कुछ

सेन्टीमीटर से लेकर करीब एक मीटर तक मोटा होता है। यह मशीन के आकार और शक्ति पर निर्भर है। होवरक्राफ्ट हवा के इसी गद्दे पर तैरता चलता है।

इस तरह के वाहन, एस-आर-एन-१ का वजन ४ टन होता है। इसके इंजनों की शक्ति तीन सौ चालीस किलोवाट होती है। यह अड़तीस सेन्टीमीटर गहरे हवाई गद्दे पर सत्तानबे किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार से चलता है।



२८. होवरक्राफ्ट

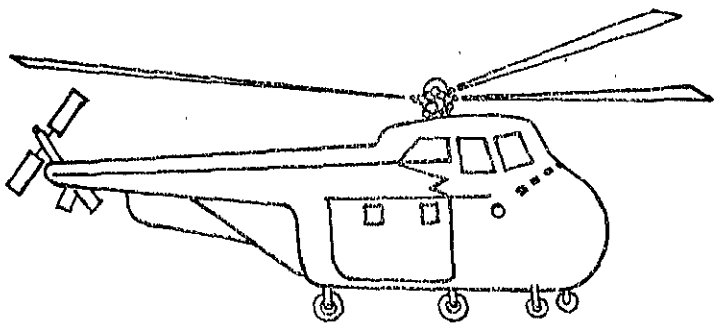
इंगलिश चैनल के आर-पार एक सौ साठ किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार से चार सौ मुसाफिरों, अस्सी मोटरों व अन्य सामान को ढोने वाले एक होवरक्राफ्ट का प्रारूप तैयार किया जा रहा है।

इस तरह के यान की व्यापक सम्भावनाएँ हैं। इसका धरती से कोई वास्तविक संबंध नहीं होता है और किसी भी प्रकार की सतह पर आसानी से चल सकता है। जब तक कि हवाई गद्दे की मोटाई से ऊँचा कोई अवरोध सामने नहीं आता है, तब तक यह वाहन आसानी के साथ बर्फीले इलाकों, रेगिस्तानों, खेतों, समुद्रों और नदी, झील व नालों पर से आसानी के साथ गुजर सकता है। इसके लिए जमीन पर कोई खर्चीली सड़क बनाने की जरूरत नहीं है और समुद्र में तो यह जलयानों से बखूबी प्रतिद्वंदिता कर सकता है।

एक अन्य महत्त्वपूर्ण आविष्कार जिस पर कि इस समय परीक्षण हो रहे हैं,

सीधे उड़ान भर सकने और उतर सकने वाले विमान हैं। हम हैलीकाप्परों से पहले ही बखूबी परिचित हैं। यह छोटा जहाज होता है, जिसके ऊपर पंख लगे रहते हैं। यह सीधा उड़ान भरने और उतरने के अलावा एक जगह इच्छानुसार स्थिर भी रखा जा सकता है। इसे आसानी के साथ प्रौपेलर के चिपटे हिस्से (ब्लेड) को झुका कर किसी भी तरफ मोड़ा जा सकता है।

जब हैलीकाप्टर का आविष्कार हुआ था, तो उससे बड़ी उम्मीदें बाँधी गई थीं। यह बड़े मकान की छत से उड़ सकता है और उस पर उतर भी सकता है। इसे मकान अथवा इमारत की छतों पर गैरज बना कर रखा भी जा सकता है। इस प्रकार यह किसी अन्य यातायात में रुकावट नहीं बन सकता है। ऐसी हालत में यह स्वाभाविक



२९. हैलीकाप्टर

है कि इसका एक बेहतर निजी वाहन के रूप में स्वागत होता। इसके बड़े पैमाने पर उपयोग से मोटरों की संख्या घट सकती थी और सड़कों पर यातायात की भीड़भाड़ कम की जा सकती थी। लेकिन दुर्भाग्य से यह निर्माण और संचालन पर आने वाले खर्च के कारण काफी महँगा साबित हुआ और कभी लोकप्रिय नहीं बन सका। इसे केवल फौजी व अन्य विशेष कार्यों के लिए ही प्रयोग में लाया जाता है, जहाँ खर्च की कोई चिंता नहीं होती है।

आजकल हैलीकाप्टर के सामने के हिस्से में अतिरिक्त प्रोपेलर या चर्खी लगाने के प्रयास हो रहे हैं। ऊपर के पंखों या चर्खी को पहले ही की तरह उतरने व उड़ान भरने में इस्तेमाल किया जा सकता है और सामने के पंखों का उपयोग जहाज़ के समान सामान्य हवाई हैलीकाप्टर को चलाने में करने की योजना है। वैसे अगर इसे निजी वाहन के रूप मेंलोकप्रिय बनाने के लिए सस्ती लागत का नहीं बनाया जा सकता है, तो भी हवाई बस के रूप में इसकी उपयोगिता लाभकारी सिद्ध हो सकती है। हाल की खबरों के अनुसार सातवें दशक के प्रारंभ के वर्षों के भीतर ही हवाई बसों का उपयोग होने लगेगा। हवाई बसें चल जाने से मौजूदा सड़कों की व्यस्तता और भीड़भाड़ कम की जा सकेगी।

भविष्य की झाँकी

हमारे वर्तमान यातायात का भविष्य क्या होगा ? हमारे सामने अभी तक जो कुछ हुआ है उसकी तस्वीर मौजूद है, लेकिन क्या इससे आगे संभावित घटनाओं की झलक मिल सकेगी ?

जेट हवाई जहाज़ चौबीस सौ किलोमीटर प्रति घंटे से भी ऊपर की रफ्तार के साथ उड़ान भर चुके हैं और इनसे बत्तीस सौ किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार की आशा बाँधना असंगत नहीं होगा। इसके अर्थ यह हुए कि धरती के सुदूर क्षेत्र की यात्रा में छः घंटे से ज्यादा का समय नहीं लगेगा।

इससे न केवल हवाई यात्रा में क्रांति ही आएगी बल्कि यातायात का सारा ढाँचा ही बदल जाएगा। मुसाफिरों को रास्ते में सोने अथवा खाने की जरूरत नहीं पड़ा करेगी। यहाँ तक कि सुदूर क्षेत्रों की यात्रा बस यात्रा के अलावा और कुछ नहीं रह जाएगी। मुसाफिरों को सिर्फ बैठने की जगह की ही जरूरत पड़ा करेगी। अल्प दूरी की यात्रा वे खड़े रह कर ही तय करना पसंद कर लेंगे। लेकिन यह तभी संभव हो पाएगा, जब जेट हवाई जहाज की यात्रा के किराए की दरें रेल व बसों की दरों के बराबर ले आई जाएँगी।

अगर हवाई जहाजों का किराया रेल व बसों से थोड़ा ही ज्यादा रहेगा, तो भी जनता हवाई यात्रा ही समय बचाने के लिए पसंद करेगी। कोई भी आदमी हवाई यात्रा में खर्च होने वाले कुछ घंटों के मुकाबले जलयानों, रेल व बसों में दिन और हफ्ते लगाना शायद ही पसंद करेगा।

इसलिए जहाँ तक अल्प दूरी या तीन सौ किलोमीटर की दूरी का प्रश्न है, इन्हें बसों, मोटरों और हवाई बसों द्वारा तय किया जा सकेगा। जहाँ सड़कें नहीं हैं अथवा दूरी कम करनी है, वहाँ होवरक्राफ्ट काफी उपयोगी सिद्ध होंगे।

इसका नतीजा यह होगा कि जलयान और रेलों में यातायात कम हो जाएगा। कई रेलों ने इस प्रकार की हवा का रुख पहचान लिया है और वे अब माल ढुलाई की तरफ अपना ध्यान ज्यादा केंद्रित कर रही हैं।

अब हमारे सामने माल ढुलाई संबंधी यातायात का सवाल उठता है। रेलों को ट्रकों और होवरक्राफ्टों से गम्भीर प्रतिद्वंदिता करनी पड़ेगी क्योंकि कम वजन वाला और टूट सकने वाला अथवा जल्द पहुँचाने वाला सामान यह खूबी से ढो सकते हैं। रेलों के पास केवल अपने नियत समय के भीतर सुदूर इलाकों तक भारी सामान पहुँचाने का ही कार्य रह जाएगा।

मालवाहक जलयानों का भविष्य अवश्य अंधकारमय मालूम देता है। बड़े अणुचालित होवरक्राफ्ट जलयानों को भारी क्षति पहुँचाएँगे। एक सौ साठ कि०मी० अथवा इससे ज्यादा प्रति घंटा रफ्तार से यात्रा करने वाले होवरक्राफ्ट तेज से तेज जहाज़ को पछाड़ देंगे। वह उग्र समुद्री लहरों से भी सुरक्षित रहा करेगा, क्योंकि यह सतह से ऊपर यात्रा करता है। डेक पर सामान उतारने-चढ़ाने की मेहनत करने की बजाय होवरक्राफ्टों द्वारा जमीन पर ही सामान उतारा-चढ़ाया जा सकेगा।

इनके अलावा पनडुब्बियाँ भी हैं। हम पहले ही यह दिखा चुके हैं कि कुछ चुने हुए मार्गों पर इनके द्वारा माल भेजना कितना लाभदायक सिद्ध हो सकता है। वे भी समुद्री मौसम की उग्रता से सुरक्षित रह सकती हैं, क्योंकि इनकी यात्रा समुद्र की गहराइयों में होती है।

अपना यात्री यातायात जेटों और हवाई बसों व माल संबंधी यातायात होवर-क्राफ्टों व पनडुब्बियों के हाथ गँवाने के बाद जलयानों के पास ढोने के लिए शायद ही कुछ माल बच सके। इस प्रकार उन्हें अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए बड़ा ही कठिन संघर्ष करना पड़ेगा। वे केवल पर्यटन के स्थानों तक लोगों को ऐशो-आराम के साथ ले जा सकेंगे। लेकिन इस क्षेत्र में भी होवरक्राफ्ट पुनः एक भयंकर प्रतिद्वंद्वी साबित होगा, क्योंकि यह उन स्थानों तक पहुँच सकेगा, जहाँ जहाजों का जाना असंभव है।

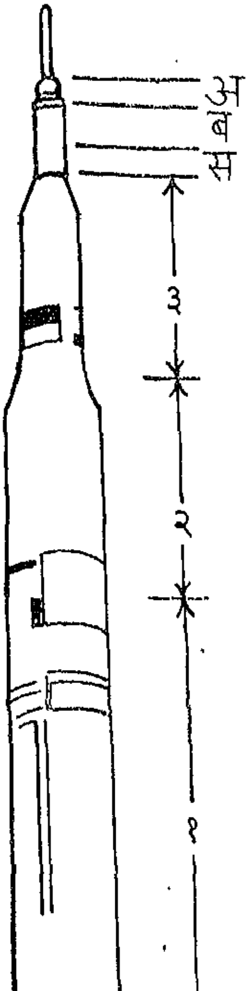
मोटरकारों का प्रचलन बना रहेगा, क्योंकि वर्तमान सड़कें भी बनी रहेंगी और फिर लोग भी इनके बिना नहीं रह सकेंगे। भीड़भाड़ यातायात का जमाव और दुर्घटनाएँ बढ़ेंगी। लेकिन काफी कुछ भार हवाई बसों और ऊपर चलने वाली छोटी रेलगाड़ियों से कम किया जा सकेगा। पैदल चलने वालों के लिए इमारतों की छतों की ऊँचाई के बराबर फुटपाथों पर चलना पड़ेगा, जिससे कि नीचे सड़कें यातायात के लिए खाली रह सकें। अत्यंत विषम स्थिति में शहरों की सीमा या घनी आबादी वाले क्षेत्रों में निजी मोटरें रखने पर प्रतिबंध भी लगाया जा सकता है।

अंतरिक्ष यात्रा में प्रगति

हम इस पुस्तक की सीमाओं के भीतर अंतरिक्ष यात्रा की संभावनाओं का ब्यौरा नहीं दे सकते हैं, क्योंकि हमारा अंतरिक्ष अभियान अभी शुरू ही हुआ है। अभी तो इस क्षेत्र में हर चीज संभव मालूम देती है। अधिकतर संभावनाएँ अंतरिक्ष की खोज के निष्कर्षों पर निर्भर करती हैं। अचानक प्राप्त कोई खोज अथवा अनुभव हमारे भविष्य के प्रयासों को पहले से अनुमान न लगाए गए रास्ते पर मोड़ सकता है।

इसलिए हम अपनी चर्चा को इस दिशा में अब तक जो हो चुका है उसकी जानकारी व वर्तमान प्रगति से आगे क्या संभावित लगता है के दायरे में सीमित रखेंगे।

चंद्रमा पर अवतरण—मानव चंद्रमा पर उतर चुका है, जिसकी दूरी धरती से



चार लाख किलोमीटर है। इसका मतलब यह है कि यात्रा के लिए अंतरिक्ष यान न केवल हर प्रकार से ठीक था बल्कि अंतरिक्ष उड़ान की कई समस्याएँ भी बखूबी हल कर ली गई हैं। इनमें से कुछ समस्याओं की चर्चा हम पहले ही कर चुके हैं।

चंद्रमा पर उतरने के लिए इस्तेमाल किए गए अपोलो यान में उसे प्रक्षेपित (बूस्ट) करने वाले राकेट के अलावा तीन हिस्से थे। पहले का नाम निर्देशक कक्ष (कमांड माड्यूल), दूसरे का सेवा कक्ष (सर्विस माड्यूल) और तीसरे का चंद्र कक्ष (लूनार माड्यूल) था। चंद्र यात्रा पर तीन यात्री रवाना हो जाते हैं। जिस भाग में वे बैठते हैं उसे कमांड माड्यूल या निदेशक कक्ष कहते हैं। सेवा कक्ष, जिसमें अतिरिक्त ईंधन, बिजली व्यवस्था व यात्रा के लिए अन्य जरूरी सामान होता है, निर्देशक कक्ष से जुड़ा रहता है। चंद्र कक्ष निर्देशक कक्ष की नोक से जुड़ा

३०. सैटर्न ५ राकेट सहित अपोलो यान

अ—निदेशक कक्ष : पृथ्वी से जाकर चन्द्रमा की परिक्रमा करने तक की यात्रा तथा वापसी के लिए।

ब—सेवा कक्ष : जरूरी सामान तथा ईंधन ले जाने के लिए।

स—चंद्र कक्ष : चंद्र तल पर उतरने तथा निदेशक कक्ष तक लौटने के लिए।

रहता है और हल्का व मकड़े की शक्ल का होता है। चंद्रमा की धरती पर यही उतरता है।

चंद्रमा की यात्रा कई दौरों में संपन्न होती है। विशालकाय सेटर्न राकेट इसे पृथ्वी की कक्षा तक प्रक्षेपित कर देता है। इस समय तक राकेट के निचले हिस्से अलग हो चुकते हैं। परिक्रमा के दौरान अंतरिक्ष यात्री सारे यंत्रों व व्यवस्थाओं की जाँच भली प्रकार कर लेते हैं और इस बात के लिए आश्वस्त हो जाते हैं कि यान अगली यात्रा के लिए तैयार है। सेटर्न राकेट का सबसे अगला हिस्सा जा अब तक अलग नहीं होता है, चंद्रमा की तरफ यान को भेजने के लिए चालू किया जाता है। यान इस तरह निर्देशित रहता है कि वह सीधा चंद्रमा की ओर ही जाता है।

तीन में से दो यात्री चंद्रकक्ष में प्रविष्ट हो जाते हैं और यह कक्ष यान से अलग होकर चंद्रमा पर उतरता है। इसमें छोटे-छोटे राकेट लगे होते हैं जिन्हें कक्ष को धीरे-धीरे सतह पर उतारने और चंद्रमा का चक्कर लगा रहे मूल यान से जुड़ने के लिए चंद्रकक्ष को पुनः ऊपर उठाने के लिए काम में लाया जाता है।

सुरक्षापूर्वक उतरने के बाद, थोड़ी देर आराम करके चंद्रयात्री बारी-बारी से अपने कक्ष से बाहर आकर चंद्रमा की धरती पर पैर रखते हैं। वे अंतरिक्ष पोशाकें पहनते हैं और साँस लेने के लिए उनके पास आक्सीजन होती है, जो चंद्रमा के वायु रहित वातावरण के लिए बहुत जरूरी है। यात्री चंद्रमा पर अपने को बहुत ही हल्का महसूस करते हैं क्योंकि चंद्रमा धरती की अपेक्षा ज्यादा छोटा है और उसकी गुरुत्वाकर्षण शक्ति भी कम है। अपनी भारी पोशाकों के बावजूद वे चंद्रमा की धरती पर आसानी के साथ उछल-कूद सकते हैं।

यात्री चंद्रमा पर अपना समय चलने, धूल व चट्टानों के नमूने एकत्र करने में बिताते हैं। वे चंद्रमा की धरती पर ऐसे यंत्र भी रखते हैं जो रेडियो संकेतों द्वारा पृथ्वी तक विभिन्न जानकारी चंद्रमा के बारे में भेजते रहते हैं। इस प्रकार अंतरिक्ष यात्रियों की वापसी के बाद भी वैज्ञानिक धरती से चंद्रमा के साथ अपना संपर्क बनाए रख सकते है।

अपोलो-११ के यात्री चंद्रमा पर पहुँचने वाले पहले मानव थे। वे अपने साथ एक बोर्ड तख्ती भी ले गए थे जिसे वे चंद्रमा की धरती पर छोड़ आए थे। इस छोटे से बोर्ड पर यह इबारत लिखी हुई थी—

यहाँ पृथ्वी नामक ग्रह से आए मानवों ने
पहली बार चंद्रमा पर कदम रखा है—जुलाई १९६९ ई०
हम समस्त मानवता के लिए शांति की कामना लेकर आए हैं।

इस इबारत के नीचे अंतरिक्ष यात्री नील ए, आर्मस्ट्रांग, माईकेल कालिंस, एड-विन ई आल्ड्रिन जूनियर के अलावा अमरीकी प्रेसीडेंट रिचार्ड निक्सन के हस्ताक्षर थे।

अपोलो-११, २१ जुलाई, १९६९ में चंद्रमा पर उतरा था। चंद्रमा पर अपने उद्‌देश्य की पूर्ति के बाद यात्री अपने चंद्रकक्ष में पुनः आ गए और उसे चंद्रमा की कक्षा में चक्कर लगा रहे मूल यान से जुड़ने के लिए चालू कर दिया। वे निर्देशक कक्ष के साथ जुड़ कर वापस धरती पर सुरक्षा पूर्वक आ गए।

चंद्रमा की अगली यात्रा अपोलो-१२ द्वारा की गई। यह अपोलो-११ के उतरने के स्थान "शांति के समुद्र" से प्रायः साढ़े चौदह सौ किलोमीटर दूर नए स्थान "तूफानों के समुद्र" के पास उतरा था। इसमें चार्ल्स कोनरैड जूनियर, रिचार्ड गोर्डन और एलन बीन ने यात्रा की थी। धूल और चट्‌टानों के नमूनों के अलावा वे अपने साथ इकतीस माह पूर्व छोड़े गए मानवरहित यान के कुछ अवशेष भी लाए थे।

अपोलो-१३ चंद्रयात्रा में असफल रहा, क्योंकि इसके सेवा कक्ष को रास्ते में ही क्षति पहुँच गयी थी अतएव वह चंद्रमा पर उतरने बिना ही वापस धरती पर आ गया था।

अपोलो १४ तथा १५ की चंद्र यात्राएँ सफल रहीं। अपोलो-१५ इस कारण उल्लेखनीय है क्योंकि यह अपने साथ चंद्र यात्रियों को चंद्रतल पर घुमाने के लिए एक गाड़ी भी ले गया था। यह गाड़ी बैटरी चालित थी और चंद्रयान में एक ओर रखी हुई थी।

३१ जुलाई १९७१ को चंद्रयात्री डेविड आर० स्काट तथा जेम्स बी० इरविन

ने प्रथम बार चंद्रतल पर गाड़ी में सवारी की। गाड़ी की औसत चाल आठ किलो मीटर प्रति घंटा थी जो समतल चाल तक पहुँच गई थी।

अगले दो दिनों में भी चद्र यात्रियों ने गाड़ी में बैठ कर चंद्रतल की सैर की। उसके बाद वे वापस मूल यान में लौट आए जो चंद्रमा के चक्कर लगा रहा था। अपने १२ दिनों के सफल अभियान के चंद्र यात्री पृथ्वी पर सकुशल लौट आए।

अन्य ग्रहों की यात्रा—यही तरीका हमारे सबसे नजदीक के ग्रह मंगल और शुक्र पर उतरने के लिए अपनाया जा सकता है। राकेट वहाँ पर बहुमूल्य ईंधन को जलाए बिना उतर सकता है और वायुमंडल-अवरोध का उपयोग ब्रेक के रूप में कर सकता है। मंगल का वायु मंडल बहुत ही पतला है। अगर जरूरत पड़ी तो राकेट अपनी कुछ शक्ति का उपयोग सुरक्षापूर्वक उतरने में कर सकता है।

सूदूर के बाकी ग्रह जीवन के लिए कतई घातक हैं। विशेषतौर पर विशाल-काय जुपिटर, सैटर्न, यूरैनस और नेपच्यून ग्रह विषैली गैसों के भारी आवरण से ढके हुए हैं। यह संभव है कि यात्री इन ग्रहों के कुछ बड़े उपग्रहों पर उतर कर खोजी यंत्रों के सहारे से जानकारी प्राप्त करें।

इन यात्राओं से मनुष्य को होने वाली उपलब्धि संभव है कि उसे सूर्य के उस पार जाने की प्रेरणा दे या न दे। लेकिन मानव लालच में न भी आए तो भी देर सवेर उसको वैज्ञानिक उत्सुकता और जोखिम उठाने की भावना उस पर जरूर हावी होगी ऐसा हमें विश्वास है। लंबी दूरियाँ और उनमें निहित समस्याएँ बड़ी व्यापक और और प्रभावकारी हैं। सूर्य पृथ्वी से पंद्रह करोड़ किलोमीटर (नौ करोड़ तीस लाख मील) दूर है। अगला सबसे नजदीकी नक्षत्र प्रोक्जीमा सेंटरी चार शंख किलोमीटर दूर है। इन तक अगर दस लाख मील प्रति घंटे की रफ्तार से कोई यान भेजा भी जाए तो उसे पहुँचने में तीन हजार वर्ष लग जाएँगे।

जरूरी तेज गति प्राप्त करने के लिए एक आणविक और विद्युत मिश्रित ईंधन विकसित किया जा रहा है। इस पर भी अंतरिक्ष में गहराई से प्रविष्ट होने से पहले अंतरिक्ष यात्रा के प्रति एक बिल्कुल नया दृष्टिकोण अपनाना पड़ेगा। इस समय

यह अनुमान लगाना व्यर्थ ही होगा कि समय आने पर अंतरग्रहीय यात्रा के लिए नए अविष्कार कौन-सा द्वार खोलेंगे ।

ग्रहों, नक्षत्रों और आकाश गंगाओं का अध्ययन वास्तव में आकर्षक विषय है । हम ग्रहों पर पहुँचने अथवा उनके और भी आगे जाने पर क्या पाने की उम्मीद रखते हैं ? क्या हम दूसरी दुनियाँ में अपनी ही तरह के जीव पाने की आशा लगाए हैं ?

कहाँ तक, कितना तेज और कब ?

प्राचीन काल से लेकर आगे जहाँ तक हम कल्पना कर सकते हैं, यातायात में हुई प्रगति पर संक्षिप्त दृष्टि डाल लेना असंगत न होगा ।

प्राचीन मानव ने तीन से छः किलोमीटर प्रतिघंटे की रफ्तार से चलना शुरू किया था । यह उसकी सबसे तेज चाल थी । इस गति से उसके लिए लंबी यात्राएँ करना संभव नहीं था । सबसे लंबी यात्राएँ शायद वह शिकार के लिए ही करता होगा, जो उसे उसके निवास स्थान से पंद्रह से पच्चीस किलोमीटर तक ही दूर ले जाती होगी । अगर इतनी दूर जाने पर भी शिकार नहीं मिल पाता होगा तो वह कोई बेहतर स्थान खोज लेता होगा । उसे ज्यादा लंबी यात्राएँ करने की बजाए इसमें ज्यादा सहूलियत महसूस हुई होगी ।

यह हालत हजारों वर्षों तक ऐसी ही बनी रही । तब पशुओं का पाला जाना और उन पर काबू पाना शुरू किया गया । इन उपायों से मानव की यात्रा की गति बढ़ कर पंद्रह किलोमीटर प्रति घंटा हो गई । लंबी यात्राओं पर यह संदेह था कि मानव और पशु दोनों ही क्या इससे ज्यादा गति बर्दाश्त कर सकते थे । इस समय तक मानव खेती करने लगा था । उसकी सबसे लंबी यात्राएँ संभवतः अन्य समुदायों के साथ व्यापार के सिलसिले में ही होती होंगी । इसके लिए उसे सौ किलोमीटर से ज्यादा जाने की जरूरत नहीं पड़ती होगी ।

बेशक, उस समय मार्कोपोलो से जैसे भी लोग थे, जिन्होंने एक ही प्रयास में हजारों मील की यात्राएँ कर डाली थीं । लेकिन उन्हें अपनी प्रत्येक यात्रा में कई वर्ष

लगे थे। लेकिन ऐसे लोग नियम नहीं एक अपवाद थे। इसी श्रेणी में वे साहसी नाविक भी आते हैं जिन्होंने नए मार्गों की खोज में हजारों किलोमीटर की यात्राएँ की थीं। यह स्वाभाविक ही था कि और लोग भी उनका अनुसरण करते।

भाप, पेट्रोल और डीजल चालित इंजनों का अविष्कार होने तक मानव सभ्यता की इस पूरी अवधि में उसके यातायात की गति में कोई ज्यादा वृद्धि नहीं हुई थी। नए आविष्कारों के साथ ही गति में एकदम से तेजी आई और वह डेढ़ सौ किलोमीटर प्रति घंटा तक पहुँच गई। अंतर महाद्वीपीय व्यापार भी होने लगा।

जेटों और हवाई जहाजों ने इस गति को सैंकड़ों मील प्रति घंटे तक और बढ़ा दिया और मानव एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप की यात्रा स्वच्छंदतापूर्वक करने लगा।

गति बढ़ने के साथ ही जेट ध्वनि से भी तेज गति से चलने लगे। आवाज या ध्वनि की रफ्तार बारह सौ किलोमीटर प्रति घंटा है। इससे भी तेज गति को सुपरसानिक या ध्वनि से भी ज्यादा वेग से चलना कहा जाता है।

राकेटचालित कृत्रिम उपग्रह तीस हजार किलोमीटर प्रति घंटे की गति को पार करगए हैं और कुल नब्बे मिनट में पृथ्वी की परिक्रमा पूरी कर लेते हैं। चंद्रमा की यात्रा में यानों की गति इससे भी काफी ज्यादा थी। वास्तव में पिछले पचास वर्षों के भीतर हुई प्रगति बहुत ही आश्चर्यजनक है।

जब मानव अंतरग्रहीय अंतरिक्षों की खोज करेंगे तो गति के उच्चतम से उच्चतम मापदंड कायम होने लगेंगे। उसे अन्य सुदूर ग्रहों तक पहुँचने के लिए करोड़ों मील प्रतिघंटे की रफ्तार रखनी पड़ेगी।

कब हम इन आश्चर्यों की उम्मीद रखें ?

हम यह देख ही चुके हैं कि मानव चंद्रमा तक पहुँच गया हैं, जो धरती से चार लाख किलोमीटर दूर है। यदि वह और आगे जाना चाहता है तो उसको कम से कम नजदीक के ग्रहों तक की यात्रा के लिए यात्रा का वही साधन अपनाना होगा। लेकिन क्या उसे और आगे जाने की लालसा होगी ?

भविष्य में उन्नति तीन मुख्य बातों पर निर्भर रहेगी। मानव शक्ति, तकनीकी जानकारी और धन। चंद्रमा की यात्रा ने यह दिखला दिया है कि क्षमता पर संभव कार्यों के लिए आदमियों की कमी नहीं रहेगी। पहले भी वैज्ञानिकों ने कई समस्याएँ हल की हैं और उनसे यह उम्मीद की जा सकती है कि वे आगे भी आने वाली समस्याओं को हल करेंगे। जहाँ तक धन का सवाल है, जबसे अंतरिक्ष की खोज सामरिक महत्व और प्रतिष्ठा का प्रश्न बन गई है, तब से रुपया पानी की तरह बहाया जाने लगा है। आखिर यह स्थिति कब तक जारी रहेगी ?

हमें यह भली प्रकार ध्यान रखना होगा कि अंतरिक्ष यात्रा में बहुत धन खर्च होता है। कहा जाता है कि अमरीका अपने अंतरिक्ष कार्यक्रमों पर अबतक अरबों डालर खर्च कर चुका है।

अब जबकि फौजी आवश्यकता व प्रतिष्ठा कोई अर्थ नहीं रखती है, धन का व्यय अन्य बातों की अपेक्षा और अंतरिक्ष की होड़ को नियंत्रण में रख सकेगा।

अंतरिक्ष यात्राएँ इंद्रधनुष के समान रंगीन और चमकदार हो सकती हैं, लेकिन उन्हें इसके लिए धन का भी विचार ध्यान में रखना होगा।

यह भी संभव है कि फौजी आवश्यकता का मार्ग अन्य दिशाओं की तरफ मुड़ जाए। मानव को यह सोचना होगा कि वह एक दूसरा अंतरिक्ष कार्यक्रम चाहता है या एक और विश्व-युद्ध। निःसंदेह वह दोनों चीजों को एक साथ लेकर नहीं चल सकता है।